जुलाई, 1984
वर्ष 20 ❋ अंक 1 मूल्य 1.35

ज्ञानामृत

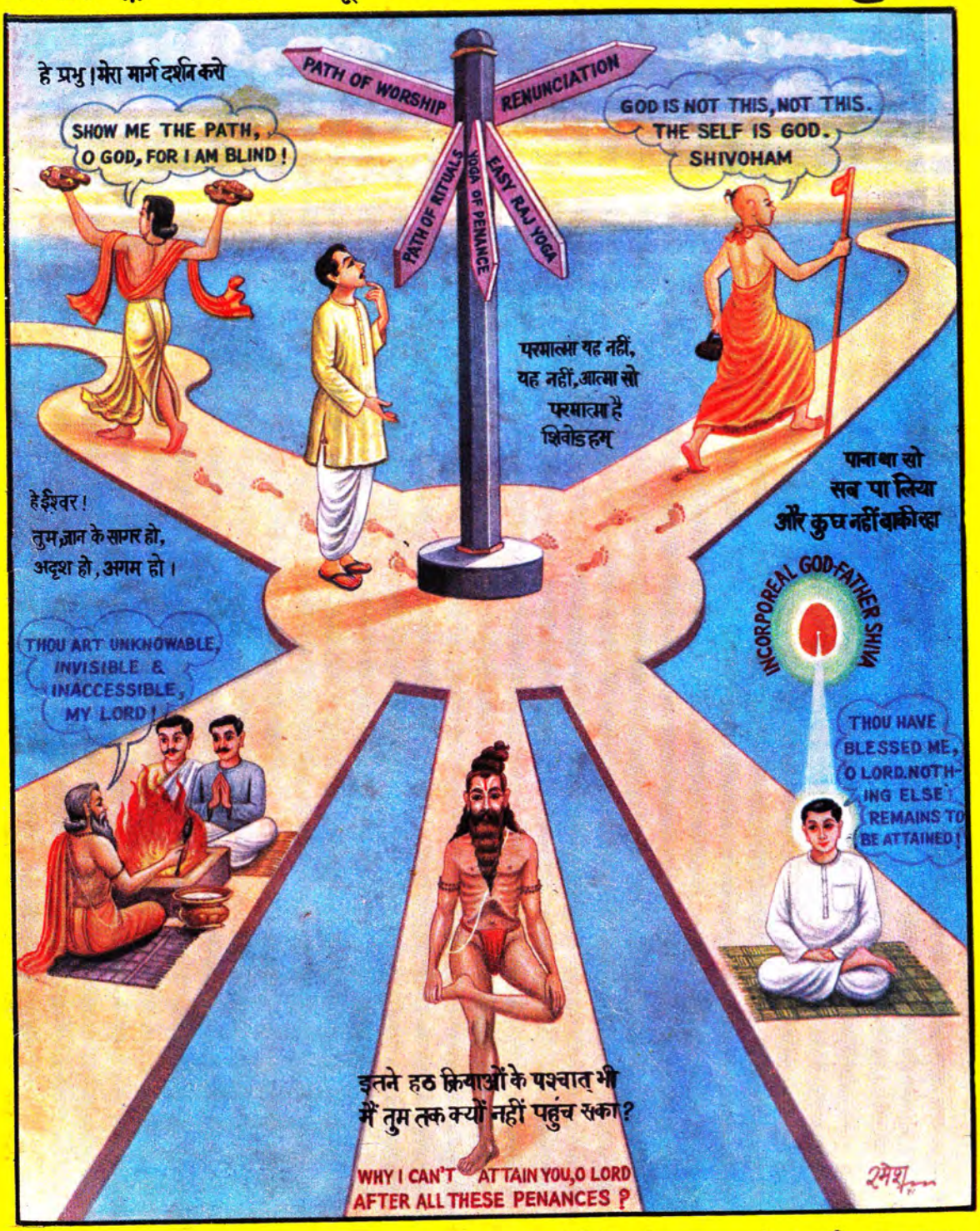

इन मार्गों द्वारा अल्पकाल ही के लिये और अपूर्ण ही प्राप्ति होती है। जो सहज राजयोग परमपिता परमात्मा स्वयं सिखाते हैं, केवल उस संमार्ग द्वारा ही सम्पूर्ण और चिरस्थायी पवित्रता, सुख एवं शान्ति की प्राप्ति होती है।

हुबली से फिल्म डिविजन का एक ग्रुप जो आबू पर्वत पर फिल्म 'ऋण मुक्ता' शूटिंग करने पधारा था ओम शान्ति भवन में ब्र० कु० दादी प्रकाश मणि जी के साथ।

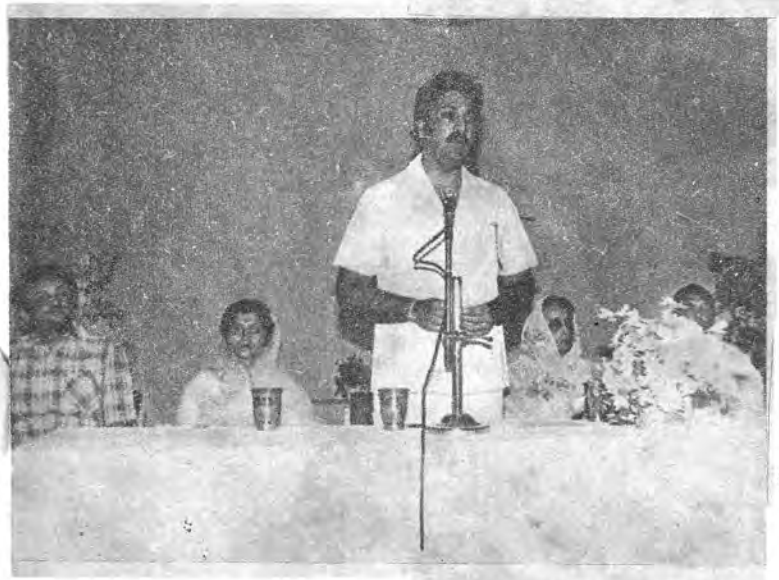

देश विदेश से पधारी ब्र० कु० ई० विश्वविद्यालय के भिन्न 2 सेवाकेन्द्रों पर ईश्वरीय सेवा में तत्पर 900 शिक्षिकाओं के समक्ष अपने उद्गार प्रकट कर रहे हैं जोधपुर के आदरणीय गजसिंह महाराज जी।

बेलगाम के समीप निदासोसी के निज-लिंगेश्वर महास्वामी के 61 वें जन्मोत्सव पर भाषण करते हुए ब्र० कु० भ्राता महादेव जी।

संकेश्वर में आध्यात्मिक मेले का उद्घाटन दृश्य।

कर्वी-चित्रकूटधाम में आयोजित 11 वां रामायण मेले के अवसर पर विश्व नव-निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी लगाई गई जिसका उद्घाटन उ० प्र० के आबकारी मन्त्री भ्राता बासुदेव पांडे कर रहे हैं।

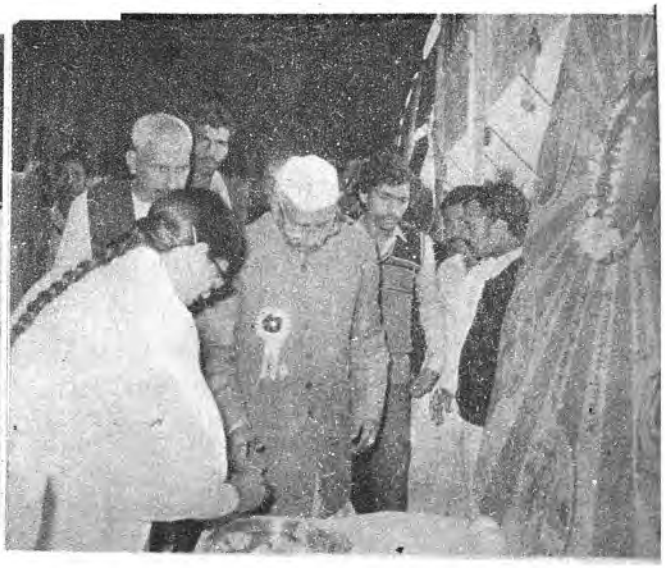

बोकारो इस्पात नगर सेवाकेन्द्र द्वारा आयोजित चरित्र निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करने के पश्चात् चित्रों की व्याख्या समझते हुए भ्राता एन० सुन्दरशन, सहायक टाऊन प्रबन्धक। चित्रों की व्याख्या कर रही हैं ब्र० कु० सुमन बहन।

नेरोबी में भ्राता नन्दरा, नेरोबी के सामाजिक कार्यकर्त्ता, डा० टेलर, महासचिव 'धर्म और शांति विश्व सम्मेलन' के सेवाकेन्द्र पर पधारने पर ब्र० कु० ज्योतसना, भ्राता हरषद जी तथा दया भाई के साथ दिखाई दे रहे हैं।

Regd No. 10563/65-D(E)-70

मण्डी में विश्व नव शांति सम्मेलन के उद्घाटन के समय पर मण्डी के जिलाधीश, ब्र० कु० चक्रधारी, ब्र० कु० दादी चन्द्रमणि जी दीपक प्रज्जवलित कर रहे हैं।

डुगंरपुर में राजयोग प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए नगरपालिका के अध्यक्ष भ्राता किशनलाल गर्ग जी। ब्र० कु० जसवन्ती, ब्र० कु० शील, ब्र० कु० बिमला तथा अन्य शिव बाबा की याद में खड़े हैं।

दार्जीलिंग के स्थानीय चेम्बर हाल में आयोजित प्रदर्शनी के उद्घाटन अवसर पर (दाएं से) ब्र० कु० रानी, ब्र० कु० स्वदर्शन तथा मुख्य अतिथि भ्राता पो० वी० दास गुप्ता, पो० सुन्दास तथा श्रीमति दास गुप्ता बिराजहैं। ⟶

कलकत्ता में इटांली में राजयोग प्रदर्शनी का उद्घाटन करती हुई ब्र० कु० सन्तरी बहन तथा न्यु इरा कम्पनी के प्रबन्धक निर्देशक भ्राता त्रिबुबन चरद जी।

पानीपत में हरियाणा राज्य खादी एपक्स के अध्यक्ष को आध्यात्मिक प्रदर्शनी के चित्रों पर समझाती हुई ब्र.कु.बहन।

अमृत-सूची

क्रम सं०	विषय			पृष्ठ
१.	रूहानी सेना का सबसे श्रेष्ठ हथियार—अच्छे कर्म	...	...	१
२.	पंजाब की समस्या ऐतिहासिक आईने में तथा इसका हल परस्पर प्रेम बढ़ाने में (सम्पादकीय)	...	...	२
३.	त्याग से तेज बढ़ता है	...	...	६
४.	शुभ-चिन्तन की कला	...	...	८
५.	योग के लिए युक्तियाँ	...	...	९
६.	योगी होगा सदा भरपर (कविता)	...	...	११
७.	राज्य-सुख से भी बड़ा योग-सुख	...	...	१४
८.	परिवर्तन	...	...	१६
९.	शान्ति की शक्ति और क्रान्ति	...	...	१९
१०.	हम दुनिया नई बसायेंगे (कविता)	...	...	२१
११.	दुख और अशान्ति भी संक्रामक रोग हैं इनसे बचने के सहज उपाय	...	...	२२
१२.	आध्यात्मिक जगत	...	...	२४
१३.	सेवा समाचार (चित्रों में)	...	...	२६
१४.	ओ शिव शक्ति (कविता)	...	...	२८
१५.	आध्यात्मिक सेवा समाचार	...	...	२९

रूहानी सेना का सबसे श्रेष्ठ हथियार—अच्छे कर्म

(ब्र० कु० दादी जानकी जी के क्लास के कुछ अंश)

कर्मों की गति बड़ी गहन है। जैसे ईश्वर बेअन्त है, तेरा अन्त नहीं पाया जाता। इतना ही कर्म बड़े बलवान हैं। कर्मों की गति गहन है। पास्ट के विकर्मों को नाश करने के लिए परमात्मा को याद करते हैं। परमात्मा ने जो कर्म सिखलाये हैं वह कर्म ही हमें महावीर बलवान बना देते हैं। श्रीमत हमें श्रेष्ठ कर्म सिखला रही है। तुम कर्म अच्छे करेंगे तो तुम्हारी जीत ही जीत है। हम रूहानी सेना का एक ही श्रेष्ठ हथियार है—अच्छे कर्म। कर्म से भाग्य बनता है। भाग्य विधाता हमारे हाथ में भाग्य देता है--हमारे से कर्म करवाकर। कहता है तुम अच्छे कर्म सीखो। कर्म से तुम्हारे में गुण आ जायेंगे। गुणों को कर्मों में लाओ। जिसमें कोई छोटा सा भी गुण था उससे परमात्मा ने सेवा कराई। कर्म करने से मनुष्य सीखता बहुत है। पहले कर्म करना सीखा तो गुण आते रहे। एक कर्म से गुण आते दूसरा भाग्य से गुण आते। कोई गुणवान अच्छा होता तो कहते इसका भाग्य अच्छा है। पूर्व कर्म के अनुसार भी अच्छे गुण आ जाते हैं। तीसरा संग से भी गुण आते हैं। और भगवान में भावना रखने से गुण आते। पहले कहते थे मैं निर्गुण हारे में कोई गुण नाही। आपको तरस पड़ेगा। तो भगवान को तरस पड़ा है जो उसने अपना बच्चा बनाया। बच्चा बनने से हम गुणवान बन जाते। आपकी दृष्टि से आपके प्रेम से हमारे अवगुण चले गये।

□□

पंजाब की समस्या ऐतिहासिक आईने में तथा इसका हल परस्पर प्रेम बढ़ाने में

अभी पिछले दिनों पंजाब में, विशेषकर अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर में, भारत सरकार ने जो सशस्त्र सैनिक कार्यवाही की, उसकी चर्चा देश-विदेश के समाचार पत्रों में तथा सभामंचों पर हो रही है। कुछ लोग इसके विरुद्ध परन्तु अधिकतर लोग इसके पक्ष में अपने विचार प्रगट कर रहे हैं। कुछ लोग सरकार के कदम को ग़लत ठहराते हैं परन्तु बहुत-सारे लोग यह भी कहते हैं कि यह कार्यवाही तो पहले हो जानी चाहिए थी। परन्तु हमारे सामने प्रश्न यह नहीं है कि हम इन दोनों पक्षों में से किसी एक को ग़लत और अन्य को ठीक कहें। एक आध्यात्मिक संस्था होने के नाते हमारी सद्भावना सभी के लिए है और हम सभी के कल्याण की कामना करते हैं। परन्तु हम इतना अवश्य कहना चाहते हैं कि वास्तव में पिछले २ वर्षों में जो कुछ भी हुआ, हमें उसे ऐतिहासिक परिपेक्ष (Historical Perspective) में देखना चाहिए और तब उसका हल निकालना चाहिए। हिन्दुओं और सिक्खों के बीच में परस्पर सम्बन्ध बिगड़ने के जो कारण घटित हुए, उन्हें हमें विहंग दृष्टि से जानना चाहिए।

यह सर्व-ज्ञात है कि गुरु नानक देव जी ने हिन्दुओं और मुसलमानों में सद्भावना होने पर बल दिया था। उनके अनेक चित्रों में वाला और मरदाना नाम के क्रमशः हिन्दू और मुसलमान शिष्य उनके दोनों ओर बैठे हुए दिखाये जाते हैं। नानक जी ने परमात्मा को ओंकार नाम दिया जो ओ३म् शब्द का ही रूपान्तर है। और उनकी अपनी वाणी में 'राम' नाम को ही अधिक महिमा गाई गई है। उन्होंने कभी यह नहीं कहा कि वे किसी अलग धर्म के स्थापक हैं बल्कि वे तो १ ओंकार की ओर इशारा करते हुए भ्रातृत्व की भावना को जगाते और पुष्ट करते रहे। वे आत्माओं के पुनर्जन्म को तथा कर्मों और संस्कारों को मानते हुए परमात्मा की याद से स्वयं को पवित्र करने पर बल देते रहे। इस प्रकार उनके समय में तो "सिक्ख" नाम से ज्ञात कोई अलग धर्म या जाति नहीं थी। उनके बाद गुरु अंगद नाम से उनके जो एक मुख्य शिष्य उनके सिंहासन पर बैठे, उन्होंने नानक जी तथा अपनी रचनाओं का संग्रह कर ग्रन्थ साहब को प्राथमिक रूप दिया। उनके बाद तीसरे गुरु अमरदास और चौथे गुरु रामदास हुए। उन्होंने ही अमृतसर की नींव डाली और उसमें जो धार्मिक स्थान बनाना शुरू किया, उसके पवित्रतम भाग को 'हरि मन्दिर' अथवा 'हरमन्दर' नाम दिया। पाँचवें गुरु अर्जुन देव ने इस मन्दिर को सम्पूर्ण किया तब भी कोई अलग वेष-भूषा, अलग नाम या अलग धर्म नहीं था बल्कि सभी गुरुओं के नामों और मन्दिर के नाम (हरि का मन्दिर) से स्पष्ट विदित है कि पृथकता (Separatism) के कोई भाव नहीं थे। जाति और वर्ण के भेद बिना वहाँ सरोवर में सब स्नान करते और मन्दिर में इकट्ठे भक्ति करते अथवा लंगर में भोजन भी इकट्ठा ही किया करते। सभी हरमन्दर की परिक्रमा लगाते थे और वहाँ जो मूर्तियाँ रखी थीं, उनकी भी पूजा करते थे।

पाँचवें गुरु अर्जुन देव जी ने ग्रन्थ साहब में अन्य जिन भक्तों की वाणियों को सम्मिलित किया, वे—रामानन्द, जयदेव, त्रिलोचन, धुरदास, रविदास, नामदेव, सदना, सांई आदि भी 'हिन्दु' भक्त ही थे। और भक्त कबीर भी तो रामानन्द जी ही के शिष्य थे। केवल एक फ़रीद मुसलमान फ़कीर थे परन्तु वे भी उदारवादी (Liberal) थे और सबके समकक्ष ही थे। सभी ने परस्पर प्रेम और प्रभु-प्रेम पर ही बल दिया और सभी भक्ति मार्ग

की ही एक शाखा थे। अत: इसे विराट वृक्ष की एक अलग शाखा ही माना जा सकता है।

परन्तु भक्ति मार्ग की इस शाखा में पहली मोड़ तभी आयी जब गुरु अर्जुन की सगाई की बात तत्कालीन मुग़ल बादशाह जहाँगीर के एक मन्त्री चन्दु की पुत्री से करने की बात चलाई गयी। चन्दु धन और मान का लोभी था और वह इस विवाह से दोनों लाभ चाहता था। परन्तु जब उसने ऐसी सम्भावना नहीं देखी तब उसने सार्वजनिक रूप से घोषणा कर दी कि अर्जुन के जैसे निर्धन घराने के साथ उसकी कन्या का कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता। इससे गुरु अर्जुन की शिष्य मंडली के मन को आघात पहुँचा। परन्तु बात यहाँ ही समाप्त नहीं हुई बल्कि गुरु अर्जुन के ईर्ष्यालू भाई ने चन्दु को गुरु अर्जुन को भड़काया और चन्दु ने बादशाह जहाँगीर को भड़काया और जहाँगीर ने गुरु अर्जुन को गिरफ़तार करा के चन्दु को सौंप दिया। चन्दु ने गुरु अर्जुन पर दो दिन तक बहुत जुल्म किया और तीसरे दिन गुरु अर्जुन ने नदी में नहाने की इच्छा प्रगट की और वहाँ वे नदी से बाहर नहीं आये।

इस सबके परिणामस्वरूप संगत में पहली बार घृणा, क्रोध तथा हिंसा आदि की भावना ने प्रवेश किया। जहाँ पहले भक्ति और हरि कीर्तन होता था, अब वहाँ इन सब वृत्तियों ने दल-बल को प्रभावित किया। परिणामस्वरूप, गुरु अर्जुन के स्थान पर, अब उनके लौकिक पुत्र हरगोविन्द को जब गुरु गद्दी पर बिठाया गया तब उनके हाथ में पूर्व सन्तों की भांति माला न थी बल्कि उनके दोनों हाथों में तलवारें थीं। अब उन्होंने शिष्य वर्ग को एक सैनिक रूप भी देना शुरू किया और एक शिष्य को सवा हज़ार या सवा लाख विरोधियों के बराबर बताया। उन्होंने अपनी एक पैदल और घोड़े-सवार फ़ौज का निर्माण भी शुरू कर दिया। इससे मुग़ल शासन को ख़तरा महसूस हुआ। इसके परिणामस्वरूप सातवें, आठवें और नवें गुरु पर मुग़लों ने काफ़ी सितम ढाये। उन्होंने नवें गुरु तेग बहादुर का शीष काट दिया। उसी की स्मृति में देहली में शीषगंज गुरुद्वारा बना हुआ है। इस सब ने शिष्यों को धीरे-धीरे एक अलग दल-बल और धार्मिक सम्प्रदाय का रूप तो दिया ही परन्तु साथ-साथ इसमें जुलम के विरुद्ध शस्त्र उठाने के लिये प्रोत्साहित तथा उत्तेजित किया। यद्यपि अब यह सम्प्रदाय मुग़लों को अपना विरोधी मानता था, तो भी अभी तक 'हिन्दुओं' से इसका कोई अलगाव नहीं था। दोनों की जीवन-पद्धति लगभग एक-जैसी थी, रिश्ते होते थे, धर्म बदलने की कोई बात भी न थी और एक ही परिवार के सदस्य माने जाते थे।

पृथक रूप

परन्तु सन १६९९ में दसवें गुरु गोविंद सिंह ने, मुग़लों के बढ़ते अत्याचार का सामना करने के विचार से इसे एक अलग सैनिक संगठन का-सा रंग दिया। कारण यह था कि बहुत-से शिष्य मुग़लों के जुल्म से बचने के लिये भय के मारे अपना धर्म-कर्म भी नहीं बताते थे। अत: उन्हें भय से मुक्त करने के विचार से गोविन्द सिंह जी ने शिष्यों को 'सिंह' की उपाधि अथवा उपनाम से विभूषित किया था। भाव यह था कि जैसे सिंह (शेर) निर्भय होता है, वे भी निर्भीक होकर व्यवहार करें। यों 'सिंह' शब्द तो राजपूत क्षत्रियों के नामों में भी आता था, अब इन्होंने वह क्षात्रित्व या वीर-भाव शिष्यों में भी जागृत किया। साथ-साथ इन्होंने शिष्यों को पांच चिह्न अपनाने के लिये भी कहा। केश, कंघा, कड़ा, कच्छा, किरपान—ये उनकी निशानियाँ निश्चित हो गयीं। इनके परिणाम स्वरूप अब सिंह-सम्प्रदाय या सिक्ख धर्म प्रत्यक्ष रूप में अलग ही दिखाई देने लगा। तो भी गुरु गोविन्द सिंह जी विचारों और विश्वासों की दृष्टि से तो बिल्कुल ही अलग न थे। उन्होंने जो ग्रंथ लिखे हैं, उनमें देवी की तथा श्री राम, शिव और श्री कृष्ण की महिमा है और उन्होंने पुराणों से ही प्रेरणा ली है। उन्होंने 'खालसा' को हिन्दुओं में वीरता का संचार करने के विचार से स्थापित किया।

उसके बाद स्वयं महाराजा रञ्जीत सिंह और उनके उत्तराधिकारी भी मन्दिरों में जाते थे और महाराजा रंजीत सिंह ने तो ज्वालामुखी की परिक्रमा की और मन्दिर पर स्वर्णमंडित छत्र भेंट

किया। कहने का भाव यह है कि हिन्दुओं और सिक्खों में तब भी भेद-भाव नहीं था। यह भेद-भाव अंग्रेज़ों ने 'आपस में अलग करो और राज्य करो (Divide and Rule) की नीति को अपनाते हुए किया। सन् १९०२ में अंग्रेज़ों ने ओवन कोल (W. Owen Cole) के द्वारा सिक्खों को कहकर **'खालसा दीवान'** की स्थापना कराई और बाद में धर्म-शुद्धि (Reform) का नाम देकर स्वर्णमन्दिर की परिक्रमा से तथा अन्य गुरुद्वारों से मूर्तियाँ बाहर निकलवा दीं। हिन्दुओं से अलगाओ की यह पहली लहर थी परन्तु फिर भी, अब से कोई ५० वर्ष पहले तक कोई विशेष भेद-भाव उत्पन्न नहीं हुए।

हाँ, सन १९१९ में ख़िलाफ़त आन्दोलन से प्रेरणा पाकर सिक्खों ने सभी गुरुद्वारों की सत्ता एक स्वचालित संगठन के रूप में अपने हाथ करने का आन्दोलन छेड़ा। तब अलगाव की लहर थोड़ी और तेज हुई। फिर, भारत के राजनीतिक बटवारे के दिनों में इस प्रवृत्ति ने थोड़ा और ज़ोर पकड़ा। परन्तु राजनीतिज्ञों को छोड़कर सामान्य जनता तो एक रूप होकर चलती रही और देश का बटवारा होने के समय तथा तब से बाद फिर दोनों मिलकर ही चलते रहे। पंजाबी सूबा की बात उठने पर थोड़ा और झटका परस्पर सम्बन्धों को लगा और प्रदेश की राजधानी, नदियों के पानी तथा कुछ इलाक़ों की बातों का निर्णय न होने के कारण सिक्ख वर्ग में असंतोष और तनाव बढ़ता गया। परन्तु पिछले दो वर्षों में तो कुछ राजनीतिक मुद्दों को लेकर तनाव बढ़ता ही गया और इसमें कुछ जोशीला तत्त्व और कुछ उग्रवादी लोग भी सम्मिलित होते गये और भारत सरकार का कहना तो यह है कि कुछ पड़ोसी विदेशों ने भी इन्हें प्रोत्साहन दिया तथा सहायता दी।

इस सब ऐतिहासिक पृष्ठ भूमिका से निम्नलिखित बातें हमारे सामने आती हैं—

परस्पर मन-मुटाव, तनाव और फ़साद के प्रायः निम्नलिखित मुख्य कारण होते हैं—

१. जब कोई सम्प्रदाय यह मासूस करता है कि उसपर बहुसंख्यक वर्ग (Majority community) सितम ढा रहा है या कोई वर्ग उससे अन्याय कर रहा है तब उसमें रोष, घृणा, क्रोध और हिंसा की लहर उत्पन्न हो जाती है, जैसे कि मुग़लों के अत्याचार से उत्पीड़ित होकर छहव गुरु गोविन्द राय और दसवें गुरु गोविन्द सिंह जी ने तलवार उठाई और शिष्यों को सैनिक संगठन दिया। इसी प्रकार सिक्ख यह भी महसूस करते रहे कि चंडीगढ़ को पंजाब की राजधानी निश्चित न करना आदि उनके साथ अन्याय है।

२. जब धर्म-सम्प्रदाय के प्रमुख लोग तथा अनुयायी वर्ग **राजनीतिज्ञों** के भड़काने या उकसाने पर उक्साहट में आ जाते हैं अथवा कुछ **स्वार्थी तत्त्वों के** प्रलोभनोत्पादक नारों से उत्तेजित हो उठते हैं तब भी तनाव बढ़ता है। अंग्रेज़ों की राजनीतिक चालों ने या जहांगीर के मंत्री चन्दू ने यही परिणाम सामने लाये। देश के बटवारे के बाद भी राजनीतिक सत्ता के इच्छुक कुछ लोग जातिवाद को हवा देने की कोशिश करते आये हैं। उन सबसे भड़ककर धर्म के अनुयायी अपने धर्म के मूल को भी भूल जाते हैं और अपने ही धर्म की मुख्यशिक्षाओं को तिलांजलि देकर ग़लत राह ले लेते हैं। गुरुओं ने जो धार्मिक सहिष्णुता, प्रेम और सद्भावना का पाठ पढ़ाया था, उसको भुलाने की घटना इसी कारण से घटी और ज़ुल्म का मुकाबला करने की बजाय कोई-कोई व्यक्ति धर्म के नाम को लेकर राजनीति से असम्बन्धित व्यक्तियों पर भी ज़ुल्म कर बैठा। कुछ थोड़े लोग पाकिस्तान आदि विदेशों की राजनीतिक चालों को भी न समझकर उन्हें अपना सहायक मानने लगे।

३. ऐसी स्थिति आने पर उग्रवादी तथा कुछ अपराधी तत्त्व भी अपने हितों को सामने रखते हुए अपने हाथ रंगने के लिये साथ मिल जाते हैं।

इन सभी मुख्य कारणों को सामने रखते हुए हमें सबसे मुख्यता इस बात को देनी चाहिये कि हिंसा के द्वारा कभी भी किसी समस्या का हल नहीं होता, चाहे वह हिंसा सरकार द्वारा हो या किसी धर्म-सम्प्रदाय के द्वारा।

अतः निष्कर्ष यह निकलता है कि परस्पर और सद्भावना से ही एक-दूसरे के निकट होकर समस्याओं का हल ढूँढना चाहिये।

हमें यह भूलना नहीं चाहिये कि गुरुओं की वाणी में भी यह आया है कि ईश्वर-प्रेमी व्यक्ति किसी को दुःख या भय का अनुभव नहीं देता और कि परमात्मा हमारा माता-पिता है तथा हम सभी उसके पुत्र हैं—मात-पिता हम बालक तेरे, तुम्हारी कृपा ते सुख घनेरे। संस्कृत की ईश्वर-स्तुतियों में भी इन शब्दों में यह भाव प्रगट करते हुए कहा गया है—त्वमेव माता च पिता त्वमेव···।" अतः एक सूत्र में बान्धने वाले इस भाव को लेकर स्वयं को "आत्मा-आत्मा भाई-भाई" अथवा एक परम-पिता परमात्मा की सन्तान मानकर परस्पर प्रेम और भ्रातृत्व से, न्याय से तथा सहिष्णुता से तथा कुटिल राजनीति और घोर स्वार्थों के भाव से ऊँचा उठकर हमें रही समस्याओं को निपटाना चाहिये।

—जगदीश

विजयवाडा सेवाकेन्द्र की ओर से आयोजित आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन, चेम्बर आफ़ कामर्स के सचिव भ्राता पांडुरंगाराव कर रहे हैं।

ज्ञानामृत के विषय में सूचनाएं

१—ज्ञानामृत का जुलाई अंक ज्ञानामृत के २० वें वर्ष का प्रथम अंक है।

२—अभी तक कई सेवाकेन्द्रों से ज्ञानामृत में सदस्यों की संख्या नहीं आई है, कृपया सदस्यों की संख्या शुल्क सहित शीघ्र भेज।

३—पेपर, छपाई के रेटस बढ़ जाने पर भी हमने ज्ञानामृत का शुल्क नहीं बढ़ाया है। परन्तु पिछले वष की भाँति इस वर्ष निशुल्क ज्ञानामृत की प्रतियाँ नहीं दी जावेंगी। आप जितने ज्ञानामृत के सदस्यों का शुल्क भेजेंगे उतनी ही प्रतियां भेजी जावेंगी।

४—छोटे-छोटे फंकशनस के फोटो न भेजें। रक्षाबन्धन के उपलक्ष्य में भी केवल अति मुख्य व्यक्तियों का ही फोटो भेजने का कष्ट करें।

५—फोटो भेजते समय स्थान का नाम और फोटो का विवरण साफ-साफ लिखें।

६—यदि फोटो ठीक नहीं होगा तो हम उसे छापने में असमर्थ होंगे। यदि फोटो के पीछे लिखा विवरण स्पष्ट न होगा तो भी फोटो नहीं छप सकेगा।

त्याग से तेज बढ़ता है

ब्र० कु० सूरजकुमार, माउण्ट आबू

तेज वह आत्मिक प्रकाश है जो मस्तक से प्रतिबिम्बित होता है। तेज आत्मा की पवित्रता व रूहानियत का प्रतिबिम्ब है। इसे दिव्य बुद्धि से समझा जा सकता है व राजयोग के अभ्यास द्वारा धारण किया जा सकता है। तेज महापुरुषों की महानता व योगियों को दिव्यता है। तेज, आत्मा के परमात्मा की समीपता का लक्षण है। ऐसे दिव्य तेज को अब हम आत्माएँ ईश्वरीय मिलन व त्याग वृत्ति द्वारा प्राप्त करते जा रहे हैं।

त्याग क्या है ? योगियों के जीवन-सरिता की वह धारा, जिसमें अनेक आत्माएँ स्नान करके निखर उठती हैं। त्याग के समक्ष अनेक मस्तक एक साथ झुक जाते हैं। त्याग आध्यात्म-जीवन की वह कड़ी है जो रूह को उसके सच्चे प्रियतम से जोड़ती है। त्याग नहीं तो मस्तक पर तेज भां नहीं और जीवन में अन्धकार है। त्याग अति सूक्ष्म धारणा है जिसे गुह्यता से समझे बिना नहीं अपनाया जा सकता।

त्याग क्या है ? उन चीजों को छोड़ देना जो हमारे लक्ष्य-पूर्ति में बाधाएँ हों। अतः जिन्हें आध्यात्म-सर्वोच्च लक्ष्य को पाने का दृढ़ संकल्प है, उन्हें अति सहज भाव से त्यागवृत्ति अपना लेनी चाहिए। त्याग के क्षेत्र में हमारा इतना सहज स्वरूप हो जो हमें ये भी आभास न हो कि हम कुछ त्याग कर रहे हैं या हमने ये त्याग किया। ये महसूसता त्याग के बाद होने वाले सूक्ष्म तनाव का कारण है जो कि त्याग के बल को कम कर देती है।

हमारे त्याग का अर्थ सन्यास नहीं है। सन्यास में तो सब कुछ छोड़कर किनारा किया जाता है, फिर वहाँ त्याग की वास्तव में आवश्यकता नहीं रहती। परन्तु हमें सब कुछ छोड़कर सन्यास तो नहीं लेना है, परन्तु उससे भी महान पथ अपनाना है कि सब कुछ साथ रखते हुए भी सम्पूर्ण त्यागवृत्ति हो। परन्तु श्रीमतानुसार कदम उठाने से यह पथ सन्यास से सरल है क्योंकि सन्यास के बाद पुनः मन का खिचाव होना सम्भव है, त्याग के बाद नहीं।

अतः त्याग की व्याख्या इस प्रकार कर कि "हम मन में कुछ भी आसक्त भाव से स्वीकार न कर।" संसार में रहते हुए हमें अनेक वैभव प्राप्त होते हैं, परन्तु हम उनका उपभोग करते हुए उनमें आसक्त न हों। बल्कि उनसे निर्लिप्त रहें। सन्यास में वस्तुओं का उपभोग नहीं बल्कि सन्यास किया जाता है। अतः हम महान-सन्यास को प्राप्त हुई आत्माओं को अपने जीवन में त्याग की मूर्त्ति बनना है।

हमारा जीवन त्याग की चेतन मूर्ति हो

हमारे जीवन से व चेहरे से दूसरों को त्याग प्रतिभासित हो। हमें यह कहने की आवश्यकता नहीं कि हम त्यागी हैं या हमने यह त्याग किया है। परन्तु त्याग के बाद उन सब पदार्थों से हमारा मन पूर्णतया उपराम हो चुका हो, तब ही हम दूसरों को त्याग की मूर्ति दिखाई देंगे। आसक्ति व लगाव हमें छूने से डरता हो, वैभव हमें दूर से ही नमस्कार करते हों, हमारा मन पूर्णतया सन्तृप्त व सन्तुष्ट हो गया हो, उसका झुकाव चारों ओर से समाप्त हो गया हो—यह है त्याग की चेतन मूर्त्त। ऐसे मूर्तियों के सामने संसार के सभी वैभवशाली प्राणी, वभवों में नीरसता अनुभव करेंगे, भौतिकता में रंगे प्राणी स्वयं को प्रकृति का गुलाम महसूस करेंगे और प्रकृति ऐसे त्यागमूर्त्त आत्माओं की पूर्ण सहयोगी होगी।

त्याग, योगियों की कसौटी है

हम राजयोगी हैं, इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि हम बाह्य शालीनता का दिखावा करें। त्याग

ही हमारी शालीनता है। त्याग ही हमारी ईश्वरीय प्राप्ति का प्रतिबिम्ब है। हम श्रेष्ठात्माओं के लिए अब ईश्वरीय अनुभूतियों के अतिरिक्त कुछ भी ग्रहण करने योग्य नहीं है। विनाशी वस्तुओं में आसक्त होकर रहना हम योगियों के स्वभाव के प्रतिकूल है। त्यागवृत्ति से ही योग की सूक्ष्मताओं का आभास होता है व आत्मा दिव्य अनुभवों से ओतप्रोत होती है। त्याग न होने से योगाभ्यास में स्थिरता नहीं होती।

त्याग से मन निर्मल होता है तथा वैभवों से बोझिल

जो आत्माएँ त्याग की मूर्ति बन चुकी हैं, वे इससे प्राप्त निर्मलता का आनन्द ले रही हैं। वैभवों का उपभोग मन को बोझिल करता है। तथा वैभवों का स्वयं के प्रति त्याग आत्मा को दिव्यता व तेजस्व की ओर ले चलता है। अतः सूक्ष्म फरिश्ता स्वरूप की स्थितियों के अनुभव के जिज्ञासुओं को चाहिए कि वे त्याग-वृत्ति धारण करें।

त्याग में बड़ा बल है

त्याग आत्मा का शक्तिशाली हथियार है। जो त्यागी हैं वे बलवान हैं। जो इच्छाओं के गुलाम हैं वे कमज़ोर आत्माएँ हैं। जहाँ त्याग नहीं होता, वहीं मन की कमज़ोरी के कारण अनेक समस्याएँ पहाड़ बन कर खड़ी हो जाती हैं। परन्तु इन समस्याओं के पहाड़ को त्याग की गदा से क्षण-भर में धराशाही किया जा सकता है या यों कहें कि वो समस्याओं का भी त्यागी होता है। त्याग आत्मा का बहुत बड़ा बल है। त्याग से मनोबल बढ़ता है तथा अलौकिक सुख मिलता है। त्याग के बल के आगे माया को भी झुकना पड़ता है। अतः इस बल को सदा अपने साथ रक्खें। हमें अपने सिद्धान्तों पर मजबूत रहने के लिए भी कठिन से कठिन त्याग वृत्ति अपनानी पड़ती है। परन्तु हमें यह कभी भी नहीं भूलना चाहिए कि इस महान त्याग के आगे अवश्य ही सभी को झुकना पड़ेगा।

जहाँ त्याग नहीं वहीं टकराव है

अनेक आत्माओं के विभिन्न संगठनों में पारस्परिक टकराव का मूल कारण, त्याग-भावना की कमी है। प्रायः व्यक्ति नाम व मान में आगे रहना चाहता है, जो कि हर समय, प्रत्येक परिस्थिति में, प्रत्येक व्यक्ति के लिए सम्भव नहीं होता है। जहाँ संगठन में कोई भी सेवा के लिए तैयार नहीं रहता, वहीं टकराव होता है क्योंकि सच्चे सेवाधारी को तो सम्पूर्ण त्याग करना ही होता है। और जो आत्माएँ आपस में टकराती हैं वे कमज़ोर हो जाती हैं और माया से टक्कर लेने का साहस नहीं कर पातीं। अतः त्यागी आत्माएँ टकराव से दूर सदा अपने ही ईश्वरीय सुखों में खोई हुई भरपूर रहती हैं।

जो त्यागे सो आगे

कई लोग त्याग को यथार्थ महत्व नहीं देते। उनका कथन इस प्रकार होता है कि त्याग करके बुद्धू बने रहने से हमें क्या मिलेगा। परन्तु त्याग आत्मा को बुद्धू नहीं, अति समझदार बनाता है। और देखा गया है, जो लोग त्याग को महत्व नहीं देते वे समय के बदलाव में पीछे रह जाते है और त्यागमूर्त्त आत्माएँ सदा ही जगमगाती रहती हैं। अतः सही अर्थों में आध्यात्म-पथ पर त्याग करने वाले ही आगे हैं। जो स्वयं त्याग करके दूसरों को आगे बढ़ाते हैं, वे उनसे भी आगे हैं। अतः महान आत्माओं को कहीं-कहीं अपना सर्वस्व त्याग करके भी दूसरों को आगे बढ़ाना होता है और यही उनकी महानता है।

त्यागी की प्रकृति दासी

जो आत्माएँ त्याग की चेतन मूर्ति बनती हैं, उनके आगे प्रकृति अपनी सम्पूर्ण सेवाएँ न्यौछावर कर देती है। आसक्त आत्मा सदा ही अभाव महसूस करती है और त्यागी आत्मा सदा भरपूर। अतः मन में ये भाव कभी नहीं रखने चाहिए कि त्याग-वृत्ति अपनाने से हमें कुछ कमी अनुभव होगी या हम जीवन भर त्याग ही करते रहेंगे क्या। नहीं, त्याग के उपरान्त सब कुछ स्वतः ही मिलता रहेगा, माँगने का भी कष्ट नहीं करना पड़ेगा।

अहम् भाव का त्याग

अनेक प्रकार के त्याग में अहम् भाव का त्याग

(शेष पृष्ठ १८ पर)

शुभ चिन्तन की कला

डा० गिरीश पटेल, मनोरोग चिकित्सक, गोरेगांव, बंबई

कान्दिवली, बम्बई के डा० मोहन देशमुख के किस्से पर विचार करें, उनका कहना है कि मैं बचपन से ही आत्मविश्वास की कमी एवं हीनता की भावना के वशीभूत था। मुझे अपने मित्रों से घुलने-मिलने, एवं परीक्षा में बैठने में काफ़ी भय लगता था। मेरी यह लघुता ग्रंथी धीरे-धीरे असामान्य स्तर पर पहुँच गई। उदाहरण के तौर पर मोटरकार चलाते समय यदि पहिया पन्चर हो जाता था, तो मैं पसीना-पसीना होकर घबराने लगता था और हक्काबक्का होकर आसानी से कार के पहिये को बदलने के लिए जैक भी नहीं लगा सकता था। इस प्रकार की स्थिति बहुधा हर परिस्थिति में होती थी। इस परेशानी को दूर करने हेतु मैंने बहुत से उपचार किये। लगभग दो वर्ष तक मैंने अनेक मनोवैज्ञानिक उपचार किये एवं मनोचिकित्सा भी कराई। मैं कई धार्मिक सत्संगों में भी गया। यहां तक कि आत्महीनता एवं घबराहट से छुटकारा पाने हेतु मैंने धूम्रपान, मदिरापान, एवं नशीली दवाओं का भी सेवन करना आरम्भ कर दिया फिर भी मैं एन्कझायटी न्युरोसीस की बीमारी से संपूर्णतः मुक्त न हो सका।

मेरी इस दयनीय स्थिति के दौरान मेरे एक मरीज़ ने मुझे ब्रह्माकुमारियों के राजयोग केन्द्र पर पधारने का निमंत्रण दिया। जब मैं वहाँ गया, एक भाई ने मुझे राजयोग की विधि समझाई। उसने कहा मैं हाड मांस का पुतला नहीं वरन् इस शरीर में दोनों भृकुटियों के बीच विराजमान चैतन्य ज्योति बिन्दु आत्मा हूँ। पहले तो मुझे यह सब बातें कपोल कल्पित लगीं परंतु जब उस भाई ने मुझे राजयोग की क्रियात्मक अनुभूति कराई तब मैंने गहरी शांति एवं हलकेपन का अनुभव किया। तद्पश्चात मैंने ज्ञानयोग का सात दिन का पाठ्यक्रम भी ग्रहण किया और राजयोग की विधि को सीखा। आध्यात्मिक ज्ञान को सीखने से मेरे दृष्टिकोण में काफ़ी परिवर्तन आया। मैं हर पस्थिति में प्रसन्नचित्त रहने लगा। मेरे परिवार के सदस्य एवं मित्रों ने भी इस परिवर्तन को महसूस किया। मेरी सफलता का आधार ज्ञानयोग है जो व्यक्ति को शुभ चिन्तन की कला सिखाता है।

डा० देशमुख का उदाहरण तो उन अनेकों में से एक है जिन्होंने राजयोग से मनोवैज्ञानिक चिकित्सीय लाभ प्राप्त किया है। अनेकानेक मानसिक एनं मानसिक-शारीरिक (Psychosomatic) बीमारियों का प्रमुख कारण अशुभचिंतन (Negative thinking) ही होता है जो बचपन से ही अचेतन मन में प्रवेश रहता है। मेरे विचारों में ऐसे व्यक्ति हमेशा असुविधा भोगी एवं पलायनवादी होते हैं। ऐसे व्यक्ति परिस्थितियों के सामने आने पर अपने को अक्षम समझकर अनिष्ठ की बात सोचने लगते हैं और उसके परिणाम स्वरूप मानसिक तनाव को मोल लेते हैं। वह सदैव निराश, हताश एवं तनावग्रस्त रहते हैं।

शुभ विचारों (Positive thinking) से मेरा तात्पर्य अति आशावादी काल्पनिक विचारों से है जो विवेक संगत हैं तथा जिससे मानसिक शांति एवं शक्ति प्राप्त होती है। शारीरिक बीमारी की महसूसता को कम करने में भी शुभचिंतन की कला बहुत उपयोगी होती है। दो वर्ष पहले मुझे स्वयं भी इसका बहुत अच्छा अनुभव हुआ था। उस समय मैं सिरदर्द एवं उल्टियों से परेशान था। मेरी दशा चिंताजनक होती जा रही थी। डाक्टरों ने इसका कारण ढूंढने का काफ़ी प्रयत्न किया परन्तु उसमें सफलता नहीं मिली। यहाँ तक कि केट स्केन (Cat scan) कराया उससे भी कुछ पता नहीं चला।

(शेष पृष्ठ २८ पर)

योग के लिए युक्तियां

लेखक—ब्र० कु० गीता, जम्मू

आज बहुत-से मनुष्य कहते हैं कि—"योग द्वारा आत्मिक सुख अनुभव करने के लिए हमारे मन में भी इच्छा तो बहुत होती है परन्तु जब कभी हम परमपिता परमात्मा की अनन्य एवं मधुर स्मृति में स्थिति होने का अभ्यास करने बैठते हैं तो हमारा मन इधर-उधर भटक जाता है और योग का जो उच्च आनन्द मिलना चाहिये तथा जीवन में जो अलौकिक परिवर्तन होना चाहिये वह नहीं होता।" ऐसी ही योगाकांक्षी आत्माओं के लिए हम परमपिता परमात्मा शिव द्वारा बताई-गई तथा अपने अनुभव में आई हुई कुछ युक्तियों का उल्लेख करते हैं जो कि सरल परन्तु बहुत ही लाभकारी हैं। उक्ति प्रसिद्ध है कि—"युक्ति से ही मुक्ति मिलती है।" अतः हमारा निश्चय है कि इन तथा अन्यान्य ऐसी ईश्वरीय युक्तियों को अपनाने से मनुष्य प्रभु-मिलन का सच्चा सुख प्राप्त कर सकता है और एक उच्च कोटि का योगी बन कर अपने सर्वोत्तम लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है।

१. पहली युक्तिः—"मैं ज्योति-बिन्दु आत्मा हूँ"

आज कोई मनुष्य तो कहता है कि "मैं **व्यापारी** हूँ, कोई कहता है कि मैं "सरकार के अमुक विभाग का **'अधिकारी'** (अफ़सर) हूँ", अन्य कोई कहता है कि "मैं **कर्मचारी** हूँ"। कोई अपने को 'पंजाबी' मानता है, कोई 'बंगाली' और कोई स्वयं को पुरुष या वृद्ध मानता है तो कोई बालक। इस प्रकार, सभी देह के नाम रूप, धन्धे, देश, भाषा आदि के अभिमानी हैं। जैसे एक छोटी-सी मकड़ी स्वयं में से एक बहुत बड़ा जाला निकाल कर स्वयं ही उस में फँस जाती है, वैसे ही आज के मनुष्यों का हाल है। वे स्वयं ही देह से सम्बन्धित अनेक संकल्पों के जाल को फैला कर स्वयं ही उसमें फँस जाते हैं और फिर उसमें से निकल ही नहीं पाते और परेशान होते हैं। इस प्रकार वे भोगी ही बने रहते हैं। उनका मन सारा दिन संसार के बखेड़ों में और प्रकृति के पिंजरे में ही घूमता रहता है और इस के परिणाम स्वरूप वे परमपिता परमात्मा की मधुर स्मृति का रस लेकर स्थायी हर्ष की प्राप्ति नहीं कर सकते। अतः जिस मनुष्य को योगी जीवन की चाह है, उसे चाहिये कि सब से पहले तो यह निश्चय करे कि **"मैं शरीर से न्यारी एक ज्योति-बिन्दु, सूक्ष्मातिसूक्ष्म आत्मा हूँ।** यह देह तो मेरा घर है, मैं इसका मालिक अथवा इसमें रहने वाला 'रहवासी' हूँ, मेरा अपना अस्तित्व इससे अलग है। अथवा, यह देह रूपी वेश-भूषा तो मुझे इस सृष्टि रूपी विराट लीला में अपना पार्ट (Part) बजाने के लिये ही मिली है, इसको धारण करने वाला मैं आत्मा तो वास्तव में परमधाम का वासी हूँ। देह रूप वस्त्र को धारण करने से पहले तो मैं अशरीरी अर्थात एक नग्न आत्मा अथवा तारे के समान एक ज्योति-बिन्दु मात्र ही था और वही मेरा निज स्वरूप है।

इस प्रकार, अन्य किसी नर-नारी की ओर देखते समय, उनसे बात करते समय, उनके साथ भोजन करते समय अथवा अन्य कोई धन्धा करते समय भी उसे इसी स्मृति में स्थित होना चाहिये कि—"इन आँखों द्वारा देखने वाली, मुख द्वारा बोलने वाली, कानों द्वारा सुनने वाली, जीभ द्वारा चखने वाली या शरीर द्वारा अन्यान्य कर्म करने वाली मैं अनादि और चैतन आत्मा इन कर्मेंद्रियों तथा ज्ञानेन्द्रियों रूपी साधनों अथवा सेवकों से अलग इन का स्वामी हूँ।"

देह में रहते हुए स्वयं को विदेही अथवा अशरीरी निश्चय करने रूपी यह युक्ति बड़ी अनमोल है। इसी के आधार पर योग की सारी मंज़िल खड़ी है अथवा, यों कहें कि यह ही योग की आधार-शिला है (Foundation Stone) अथवा पहली पहली

सीढ़ी अथवा उसका 'क' 'ख' है। इसी युक्ति का बारंबार अभ्यास किये बिना योग रूपी मंज़िल की उच्च अट्टालिका पर चढ़ने का स्वप्न कभी भी साकार नहीं हो सकता, नहीं हो सकता। आख़िर देह रूपी कलेवर को एक दिन छोड़ना तो है ही परन्तु अभी से उससे न्यारे होने के अभ्यास के फल-स्वरूप न तो वर्तमान काल में मनुष्य से विकर्म होते हैं और न ही वह दुःख का भागी बनता है क्योंकि इस अभ्यास से देह-अभिमान जो कि सभी विकारों तथा पापों का मूल है, मनुष्य का पीछा छोड़ जाता है।

पुनश्च, योग तो आत्मा और परमपिता परमात्मा ही के बीच सम्बन्ध (Connection) जोड़ने ही का दूसरा नाम है और वह सम्बन्ध तो तभी जुट सकता है जब कि मनुष्य पहले स्वयं को 'आत्मा' निश्चय करे। अतः इस प्रकार स्वयं को शरीर से भिन्न 'आत्मा' निश्चय (Soul Conscious) करना ही योग की पहली परन्तु सर्वश्रेष्ठ युक्ति है। जन्म-जन्मान्तर देह के सम्बन्धियों से बर्तते-बर्तते इस आत्मा का देह-अभिमान बहुत ही पक्का हो चुका है और सचमुच यही कारण है कि आज जब वह अपने स्नेही परमपिता परमात्मा की स्मृति का अथवा मनोमिलन का शुभ पुरुषार्थ करती है तो देह और देह के धन्धों तथा नातेदारों का भान, अभिमान अथवा याद उसे पुनः पुनः वापस इसी देह तथा स्थूल लोक की अनुभूति में खींच लाती है। अतः अब मनुष्य को चाहिये कि आत्म-निष्ठ हो क्योंकि योग-निष्ठ होने की यही युक्ति है। बड़े से बड़े बैंक के ख़जाने की चाबी हाथ लग जाने से अथवा बड़ी से बड़ी लाटरी (Lottery) मिल जाने से इतना उच्च भाग्य नहीं बनता और इतना अखुट ख़ज़ाना नहीं मिलता जितना कि देही-निश्चय रूप चाबी को मन रूपी हाथ में पकड़ कर योग रूपी तिजोरी खोलने से मिलता है।

२ दूसरी युक्ति—"मैं परमपिता परमात्मा का बालक हूँ।"

हम ऊपर बता आए हैं कि स्वयं को आत्मा निश्चय करने से ही मनुष्य का मन परमात्मा की स्मृति में टिक सकता है। परन्तु अब आगे जानने के योग्य बात यह है कि केवल 'प्रभु-प्रभु' अथवा 'ईश्वर-ईश्वर' कहने से ही मन मीठा नहीं होता। बल्कि "परमात्मा हमारा परमप्रिय परमपिता है और हम उसकी अविनाशी सन्तानें हैं" इस **सम्बन्ध को** मन में बिठाने से ही परमात्मा की स्मृति स्थिर हो सकती है क्योंकि **सम्बन्ध** के बिना सही स्मृति और खुशी हो ही नहीं सकती। सम्बन्ध ही से मनुष्य को प्राप्ति होती है और प्राप्ति से ही मनुष्य को खुशी होती है, अतः अखुट प्राप्ति का विचार ही मनुष्य को योग रूपी पुरुषार्थ के लिये प्रोत्साहित करता है। अतः जब मन में यह भाव समाया होगा कि परमात्मा, जो कि त्रिलोकीनाथ, सर्वशक्तिमान, ज्ञान का सागर, शान्ति का सागर और आनन्द का सागर है तथा मुक्ति और जीवन्मुक्ति का दाता है, वही मेरा परमपिता है, तो मनुष्य को मन में यह विचार आयेगा कि परमात्मा को तो अवश्य ही याद करना चाहिये क्योंकि उसके साथ सम्बन्ध रखने से ही तो मुझे मुक्ति और जीवन्मुक्ति की अथवा अविनाशी सुख और शान्ति रूपी ईश्वरीय सम्पत्ति की सर्वोत्तम प्राप्ति होगी। अतः परमात्मा को **पिता के सम्बन्ध** से याद करने से मनुष्य को मुक्ति और स्वर्ग का स्वराज्य रूपी ईश्वरीय जन्म-सिद्ध अधिकार का विचार आयेगा और इसकी प्राप्ति के लिये उसका मन परमपिता परमात्मा की ओर स्वतः हो जायेगा और चित्त उस परमपिता की स्मृति में स्थित होकर सुखी होगा। आज मनुष्य का मन परमात्मा की स्मृति में इसी कारण स्थिति नहीं प्राप्त कर सकता कि उसे पता ही नहीं है कि परमात्मा तो मेरा परमपिता है और मेरा तो उसकी **सम्पत्ति पर अधिकार** है और कि उस सम्बन्ध को छोड़ने के कारण ही मैं उस अधिकार को भी गँवा बैठा हूँ। अतः अब इस रहस्य को जानकर मनुष्य को इसी स्मृति में रहना चाहिये कि मैं तो "परमात्मा का बालक सो मालिक हूँ।" इस स्मृति में रहने से उसे एक अनोखा नशा-सा चढ़ा रहेगा, उस पर एक विचित्र मस्ती-सी छाई रहेगी और उसे अथाह खुशी होगी। इस खुशी का अनुभव उसे स्वतः ही परमपिता की स्मृति के लिये

आकर्षित करेगा।

३. तीसरी युक्ति—स्वयं को परमधाम तथा वैकुण्ठधाम का यात्री मानना

योग-निष्ठ होना चाहने वाले मनुष्य को सोचना चाहिए कि आत्मा तो वास्तव में परमधाम की निवासी है। वह शुरू में परमपिता परमात्मा शिव के साथ मुक्त अवस्था में **ब्रह्मलोक** ही में वास करती थी। वहाँ से ही वह इस सृष्टि रूपी नाटक में खेल खेलने अथवा इस विराट नाटक में अपना पार्ट करने के लिये आयी थी। खेलते-खेलते अब तो कलियुग का भी अन्त आ पहुँचा है। **अतः अब तो मुझे वापस परमधाम अथवा मुक्तिधाम जाना है। अब तो इस संसार में मैं कुछ ही दिन का मुसाफिर हूँ।**

सभी लोग जानते हैं कि जब कोई नाटक पूरा होता है तब तो उसमें भाग लेने वाले ऐक्टर अपने अपने पार्ट के वेश को उतार कर, अपने पहले वाले वास्तविक रूप में आ जाते हैं। इसी प्रकार, हरेक मनुष्य को सोचना चाहिये कि शरीर रूपी वस्त्र को उतार कर अब तो मुझ आत्मा रूपी ऐक्टर को भी वापस मुक्तिधाम में जाना है। मैं तो स्वयं ज्योति-बिन्दु और शरीर से न्यारा हूँ और मुझे अपने ज्योतिलोक में लौट जाना है। अब जो ऐटम बम, हाइड्रोजन बम आदि-आदि अस्त्र बन चुके हैं, उन द्वारा तथा प्राकृतिक आपदाओं आदि के द्वारा इस मनुष्य-सृष्टि का तो शीघ्र ही महा-विनाश होने वाला है। अतः अब तो इस संसार को हम आत्माओं ने यों भी छोड़ना ही है। यह संसार तो वैसे भी अब माया नगरी बन चुकी है और मुझे तो अब प्रभु-नगरी में **जाना है।**"

इस प्रकार यह जो संकल्प है कि मुझे तो अब इस माया नगरी को छोड़कर प्रभु-नगरी में जाना ही है, उससे मनुष्य का मन इस संसार से उपराम होकर सहज ही परमपिता परमात्मा की स्मृति में लग जाता है। जाने की धुन वाले मनुष्य को इस संसार की ममता नहीं खींच सकती। हम इस संसार में देखते हैं कि जब किसी मनुष्य के मन में यह संकल्प दृढ़ होता है कि अब तो मुझे अमुक नगर में जाना है तो उसका मन उस नगर की ओर अथवा स्टेशन की ओर लग जाता है और वह अपनी बुद्धि को घर गृहस्थ से हटा कर सामान को लपेटने-समेटने और तैयारी करने में ही लग जाता है। जब कोई मनुष्य प्रातः घड़ी में यह देखता है कि नौ बज चुके हैं, मुझे तो दफ्तर (अथवा दुकान) जाना है तो उसका मन घर से और नातेदारों से हटकर दफ़तर की ओर चलने लग जाता है और पुनः सायंकाल को घड़ी देख कर जब उसे यह मालूम होता है कि अब घर जाने का समय हो चुका है तो उसके मन में बस यही संकल्प चलने लगता है कि अब तो मुझे घर जाना है। ठीक इसी प्रकार यदि सृष्टि-घड़ी में देखा जाय तो अब कलियुग का अन्त होने के कारण सभी आत्माओं के वापस परमधाम जाने का समय आ पहुँचा है। **अतः अब हमारे मन में यही संकल्प चलना चाहिये कि अब तो मुझे परमधाम में अपने परम-पिता के पास लौट जाना है।** इस संकल्प से मनुष्य का मन इस संसार के नातेदारों से हटकर सहज ही परमपिता की मधुर स्मृति में टिक सकेगा।

आज मनुष्यात्माएं मुक्ति के लिये परमपिता परमात्मा से प्रार्थना तो करती हैं और अनेक प्रकार से पुरुषार्थ भी करती हैं परन्तु उन्हें यह मालूम नहीं है कि मुक्तिधाम कहाँ है और कि अब तो सभी आत्माओं के मुक्तिधाम लौटने का समय आ पहुँचा है। अतः यह ज्ञान न होने के कारण उनका मन तो इसी स्थूल संसार ही के विषय-पदार्थों में आसक्त है अर्थात बन्धा हुआ है। यही कारण है कि वह उड़ कर परमपिता परमात्मा की ओर नहीं जा सकता और यहाँ के विषय पदार्थों से उसकी ममता नहीं मिटती। परन्तु जबकि हम इस बात को मानते हैं कि हम इस संसार में मुसाफिर हैं और कि हमें तो परमधाम अथवा वैकुण्ठधाम में जाना है तो अब हमारा मन उधर ही लगना चाहिये क्योंकि मनुष्य को जिधर जाना हो उसका मन तो उसी लक्षित स्थान की ओर ही रहता है।

पुनश्च, हम यह भी देखते हैं कि जब मनुष्य अमरनाथ अथवा सोमनाथ अथवा हरिद्वार की यात्रा पर जाते हैं तो मार्ग में 'अमरनाथ की जय' 'सोम-नाथ की जय', अथवा 'जयगंगा मइया' की, इस प्रकार के नारे लगाते जाते हैं। उनके मन की आँखों

के सामने अमरनाथ, सोमनाथ अथवा गंगा मइया ही घूमा करती है। ठीक इसी प्रकार, हमारे मन के सामने भी अब मुक्तिधाम और उसके वासी मुक्तेश्वर परमपिता परमात्मा शिव ही होने चाहियें। हमें मुख से कोई जयघोष नहीं करना है क्योंकि हम तो ऐसे देश में जा रहे हैं अथवा जाना चाहते हैं जोकि वाणी से परे है, परन्तु हमारे मन में अपने लक्ष्य की सूक्ष्म स्मृति तो रहनी ही चाहिये और जहाँ से हम इस संसार में आए हैं, वह अपना वास्तविक धाम तो याद रहना ही चाहिये। यहाँ से अन्तरिक्ष यान ((Space Ships) द्वारा जो व्यक्ति ऊपर जाते हैं, उन्हें वहां भी यह याद रहता है कि हम नीचे पृथ्वी से यहाँ अन्तरिक्ष में आये हैं और हमें वहाँ लौट जाना है और वे आखिर लौट भी जाते हैं। इसी प्रकार हम आत्माओं को भी तो यह याद रहना चाहिये कि हम परमधाम से आये हैं और हमें वहीं वापस लौट जाना है और कि हमारी यात्रा अशरीरी अवस्था अथवा आत्मा-निश्चय ही से हो सकती है क्योंकि जिस धाम में हम जाना चाहते हैं, वहां देह-सहित कोई नहीं जा सकता। इस प्रकार स्वयं को यात्री मानना भी योग-निष्ठ होने के लिये सहज युक्ति है।

४ चौथी युक्ति : ज्ञान का मनन

मनुष्य का मन दिन-भर कुछ-न-कुछ तो सोचता विचारता रहता ही है। परन्तु देह अथवा संसार सम्बन्धी स्थूल बातों का मनन करने से मनुष्य की अवस्था व्यक्त ही बनी रहती है और वह ईश्वर-चिन्तन अथवा ज्ञान के मनन का अत्युत्तम लाभ नहीं ले सकता। अतः योग की अभिलाषा वाले मनुष्य को चाहिए कि वह ईश्वरीय ज्ञान का मनन-चिन्तन करता रहे क्योंकि इस प्रकार के मनन से ही वह संसार से उपरामचित्त हो कर ईश्वर से मंगल मिलन मना सकेगा और योग का रसास्वादन कर सकेगा।

इस उद्देश्य को लेकर उसे इस प्रकार विचार-मंथन करते रहना चाहिए कि—"मैं आत्मा परमधाम से इस सृष्टि-मंच पर सतयुग में आयी थी। तब मैं पूर्ण पवित्र थी। इसलिए मैं उस युग में पूर्णतः सुखी थी। इस प्रकार मैंने सोलह कला सम्पूर्ण, सम्पूर्ण निर्विकार, मर्यादा पुरुषोत्तम और सम्पूर्ण अहिंसक सूर्यवंशी कुल में कुल ८ जन्म लिए और सतयुगी सुखमयी सृष्टि अर्थात स्वर्ग का राज्य-भाग्य भोगा। उस देवता कुल में सुख-शान्ति की प्रारब्ध भोगने के बाद मैंने १२-१३ जन्म त्रेतायुग में चौदह कला सम्पूर्ण चन्द्रवंशी क्षत्रिय कुल में लेकर सुख-शान्ति सम्पन्न व्यतीत किये। फिर, द्वापर युग में वैश्य कुल में तथा कलियुग में शूद्रकुल में मैंने ६३ जन्म दुःख के लिए। अब मैं प्रजापिता ब्रह्मा के मुख से इस ईश्वरीय ज्ञान को सुन कर मुख-वंशी सर्वोत्तम ब्राह्मण कुल का एक ब्राह्मण अथवा ब्रह्मा-कुमार या ब्रह्माकुमारी हूँ। अब मुझे पावन बनना है और दूसरों को भी परमपिता परमात्मा का परिचय देकर पावन तथा देही-अभिमानी (Soul-conscious) बनाना है। फिर निकट भविष्य में ऐटॉमिक विश्व युद्ध आदि द्वारा होने वाले महाविनाश के बाद तो मुझे मुक्तिधाम में लौट जाना है और मुक्तिधाम में रहने के बाद मुझे पुनः सतयुगी सुख-धाम अथवा वैकुण्ठ में २१ जन्मों के लिए सम्पूर्ण सुख भोगना है। अहा, पुनरावृत्त होने वाला यह विराट सृष्टि-नाटक कैसा अद्भुत और रमणीक है जिसमें हर कोई अपना पार्ट कर रहा है! अब तो इस नाटक के सभी एक्टर अर्थात सभी पार्टधारी आत्माएँ इस मंच पर अपना अपना पार्ट पूरा कर चुकी हैं और अब इसके रचयिता तथा निर्देशक परमपिता परमात्मा शिव सभी आत्माओं को योग-युक्त कर वापस अपने मधुर धाम को ले चलने के लिए आए हैं—।" इस प्रकार ज्ञान-मंथन करते रहने से अथवा "स्वदर्शन चक्र" चलाते रहने से विकारों रूपी आसुरों का गला कट जायेगा और मन में माया के तूफान आने की सम्भावना बहुत ही कम हो जाएगी। ज्ञान के मनन-चिन्तन के कारण मन को अवकाश ही नहीं मिलेगा कि वह विकारी अथवा व्यर्थ चिन्तन करे और इसके फलस्वरूप वह ज्ञान-निष्ठ तथा स्वरूप-निष्ठ होकर "जैसा विचार, वैसा आचार" की उक्ति के अनुसार श्रेष्ठाचारी बन जायेगा। मन की ऐसी भूमिका वाले व्यक्ति के लिए योगस्थ होना ऐसा ही सहज है जैसा कि

बिजली का स्विच ऑन करके अर्थात बटन दबाकर प्रकाश करना। जो मनुष्य दिन-भर अपने मन रूपी बैल को ज्ञान रूपी जुए में नहीं जोतता और ईश्वर-चिन्तन रूपी क्षेत्र में उस से कार्य नहीं लेता, उसमें हर्ष की कभी उत्पत्ति हो ही नहीं सकती। जो व्यक्ति सारा दिन परमपिता शिव को भुलाकर तथा ज्ञान को घर की अल्मारी में बन्द करके रख देता है और अज्ञानी होकर व्यवहार करता है वह कभी भी योगी नहीं बन सकता—यह निश्चित है। **ऐसे मनुष्य के लिए योग-स्थित होना ऐसा ही कठिन है जैसे अत्यन्त कमजोर निगाह (नेत्र) वाले व्यक्ति के लिए सुई की आंख में से धागा निकालना। अतः जैसे गाय घास चर कर फिर जुगाली करती रहती है, मनुष्य को चाहिए कि वह प्रतिदिन ईश्वरीय ज्ञान का श्रवण करके दिन-भर चलते-फिरते भी उसका मनन-चिन्तन करता रहे, जैसे पत्थर नदी में लहरों के साथ टकराते-टकराते घिस कर शालिग्राम बन जाता है और तब भक्त लोग उसे पूजा के स्थान के योग्य मानते हैं वैसे ही ज्ञान की उमंगों और तरंगों में लहरा कर ही मन के विकार रूपी कोने घिसेंगे और वह शीघ्र ही शालीग्राम अथवा पूज्य बन जायेगा क्योंकि इस रीति से उस पर माया का वार ही नहीं होगा।** ज्ञान का मंथन ही तो योग रूपी दीपक का घृत है, अतः ज्ञान-मंथन न करने से योग रूपी दीपक की ईश्वर-प्रेम रूपी लौ का बुझ जाना स्वाभाविक ही है। अतः मनुष्य को चाहिए कि सारा दिन, उठते-बैठते अपने स्वरूप का तथा परम-पिता परमात्मा सम्बन्धी ज्ञान के किसी नुक्से का मनन करके स्वयं को व्यस्त रखे वरना जैसे खाली घर में कबूतर घोंसला बना लेते हैं और पशु-पक्षी ठिकाना कर लेते हैं, वैसे ही जिस मनुष्य की बुद्धि ज्ञान से खाली होगी, उसके मन में अज्ञान रूपी पशु, माया रूपी भूत, विकारों रूपी परिन्दे ही डेरा डाल कर भय या दुःख को पैदा करेंगे।

□□

योगी होगा सदा भरपूर

लेखक—ब्र० कु० आनन्द, जालन्धर

देह दृष्टि अभिमान नहीं
उलझन और अनुमान नहीं।
प्रेम सन्तोष आनन्द की खान
योगी का हर कर्म महान्॥

ईश्वरीय प्रेरणाएँ पूर्व आभास
अतीन्द्रिय सुखों में करता वास।
स्नेह सेवा सहयोगी संयुक्त
योगी जन सदा बन्धन मुक्त॥

हर्षित चित मधुभाषी और ताज़ा
शीतल कर्म इन्द्रियों का राजा।
मान अपमान जय-पराजय समान
योगी के बन जाते जीवन प्राण॥

ईर्ष्या द्वेष राग विहीन
निर्भयी मृत्युजंय पुण्य प्रवीण।
निस्संकल्पी सदा संतुष्ट
योगी नहीं होगा कभी रुष्ट॥

नुक्ताचीनी व्यर्थ कटाक्ष
नहीं नज़ाकत सदा स्व-साक्ष।
व्यर्थी नहीं सदा समर्थी
योगी होगा परम परमार्थी॥

नहीं अलबेलापन आलस्य असंतोष
न तन्त्रमन्त्र तत्व प्रकोप।
शुद्ध सम्पुष्ट प्रकृति है दास
दिल शिकस्ती नहीं योगी के पास॥

सफलता मूर्त्त सिद्धि स्वरूप
गुण स्वभाव ईश्वरीय प्रारूप।
अवगुण दृष्टि परिचितन से दूर
योगी होगा सदा भरपूर॥

राज्य-सुख से भी बड़ा योग-सुख

ले०-ब्र० कु० चक्रधारी, शक्ति नगर, दिल्ली

राजा विक्रमादित्य के शासन काल में एक मेधावी विद्वान किसी एक उपनगर में रहता था जो कि उज्जैन के निकट था। यद्यपि विद्या में उसे वहुत कुशलता प्राप्त थी, उसके घर में धन और पदार्थ केवल इतनी मात्रा में थे कि वह मध्यम स्तर का जीवन जीता था। परन्तु जिन्होंने उससे विद्या पढ़ी थी, वे अच्छे-अच्छे उच्च पदों पर आसीन थे और धनाढ्य तथा सम्पन्न थे। इस बात को देखकर उसकी पत्नी और उसके बच्चे कभी-कभी उससे मुँह बना लेते थे और कहते थे—"देखो जी, केवल विद्या से काम नहीं चलता, संसार में धन का मान होता है और धन वाला ही सुखी होता है। जब आपके पास इतनी विद्या है तो आप काफ़ी सारा धन क्यों नहीं इकट्ठा कर सकते। आपसे पढ़े हुए तो कहीं से कहीं पहुँच गए और आप और हम हैं कि कभी भी दिल से खर्च भी नहीं कर सकते। हाँ ठीक है, लोग कहते हैं कि आप बड़े सन्तोषी हैं और वे यह भी कहते हैं कि सन्तोष सबसे बड़ा धन है परन्तु सच पूछो तो हमें उनकी यह बात समझ में नहीं आती। वास्तव में धन भी तो चाहिए, केवल सन्तोष धन से क्या होगा ?…"

वह विद्वान उनको समझाता—"देखो भाई, केवल सन्तोष की बात नहीं, हमारे पास विद्या भी तो है और भगवान की कृपा से भला कमी भी क्या है ? दाल रोटी खाते हैं और प्रभु के गुण गाते हैं और घर में सब ठीक-ठाक ही तो है। शान्ति है, प्रेम है, शील है, स्वास्थ्य है और अधिक धन तुम करोगे भी क्या ? फिर न हम सुस्त हैं न कामचोर, जी लगाकर काम करते हैं और जो मिल जाता है, उससे पेट भरकर सुख से सोते हैं। न चिन्ता है न चोरी का डर…"

इस प्रकार का सम्वाद कभी-कभी उन दोनों में चलता रहता परन्तु एक दिन तो सभी ने उन विद्वान महोदय को घेर ही लिया। और उनके मन में यह बात जचा ही दी अथवा यों कहें कि उन पर प्रभाव डाला कि धन तो होना ही चाहिए।

आखिर विद्वान महोदय घर से बाहर निकल पड़े और उपनगर के बाहर किसी एकान्त स्थान से सोचते हुए गुज़र रहे थे कि उन्हें एक योगी ने देख लिया। योगी जी अपनी कुटिया के बाहर बैठे थे और उन्होंने देखा कि यह व्यक्ति लगता तो कोई भला आदमी है परन्तु कुछ चिन्तित दीख पड़ता है। हो सके तो इसकी चिन्ता दूर करने का यत्न करना चाहिए। इसलिए महात्मा जी ने विद्वान व्यक्ति को अपने पास बुलाया और पास बैठाकर पूछा कि उनकी चिन्ता का क्या कारण है।

विद्वान महोदय बोले—"योगी जी, क्या बताऊँ ? जितना धन होना चाहिए, उतना मेरे पास नहीं है इसलिए घर वाले बार-बार अधिक धन कमाने के लिए आग्रह करते हैं। उसी सोच में जा रहा था कि अधिक धन कैसे और कहां से प्राप्त किया जाए ?"

योगी जी बोले—"महोदय, आपको कितना धन चाहिए ?"

विद्वान—"जितना भी मिल जाए।"

योगी—"नहीं, नहीं, आप स्पष्ट बताइये कि आपको ज़रूरत कितने धन की है, आपकी खुशी

कितने धन से पूरी होगी ?"

विद्वान—"ऐसा मैंने कुछ नहीं सोचा था। जितना भी मिल जाए, मैं उससे खुश हो जाऊँगा।"

योगी—"अच्छा रुकिये, मैं इसके लिए एक उपाय करता हूँ।"

यह कहकर योगी जी एक पत्र लिखने बैठ गये। पत्र पूरा करके विद्वान महोदय के हाथ में उन्होंने पत्र देते हुए कहा—"यह पत्र आप महाराजा विक्रमादित्य के पास ले जाइये और वे आपको धन दे देंगे।"

विद्वान खुश हो गया और पत्र लेकर वहाँ से निकल पड़ा। राजा विक्रमादित्य के पास पहुँचकर वह पत्र उसने उन तक पहुँचवाया।

महाराजा विक्रमादित्य ने पत्र खोलकर पढ़ा। उसमें योगी जी ने लिखा था कि "अब मैं आपको समय दे सकता हूँ और योग की कुछ अन्य क्रियाएँ सिखा सकता हूँ। आप अपना राज्य इस पत्र-वाहक को सौंप दें और स्वयं योग-विद्या के उच्चतर अध्ययन के लिए चले आयें…"

पत्र पढ़कर राजा को बहुत खुशी हुई। उसने विद्वान महोदय से कहा, "आप तो हमारे लिए बहुत अच्छा संदेश ले आये हैं। इसके लिए आपका बहुत-बहुत धन्यवाद। अब आप इस राज्य को संभालिये। आज महाराजाधिराज के सिंहासन पर आप विराजमान होंगे और हमें योगी जी के पास योग के अन्य मनोरम रहस्य समझने और सीखने का दुर्लभ भाग्य प्राप्त होगा।…"

यह सुनकर विद्वान महोदय आश्चर्यान्वित हो गए। उनके चेहरे से लगता था कि वो असमंजस में पड़ गये हैं। उनका मुँह खुला-सा रह गया। वे हैरानी से राजा की ओर देखने लगे। उन्होंने यह सोचा ही नहीं था कि योगी जी उन्हें राज्य दिला देंगे और राजा भी योगी के लिखने मात्र पर उन्हें अपना राज्य सौंपने को तैयार हो जायेंगे। अब यह सारा वृत्तान्त देखकर वह सोच में पड़ गये कि योग के लिए राजा राज्य तक को देने के लिए क्यूँ तैयार हो गया ? अब उन्होंने समझ लिया कि योग से जो सुख प्राप्त होता है, वह राज्य और धन-दरबार से कहीं अधिक है, उच्च कोटि का है और शाश्वत है। अत: उन्हें विचार आया कि इस राज्य को लेने की अपेक्षा या बहुत धन बटोरने की कामना की अपेक्षा तो योग ही सीखना अच्छा है। तभी तो योगी के कहना राजा भी मानने को तैयार है—ये सब विचार उनकी बुद्धि में विद्युत गति से भी अधिक तेज़ी से प्रगट हुए। अत: वे राजा से बोले—"महाराज, अभी थोड़ा रुकिये, हमें ज़रा एक बार फिर योगी जी से मिल लेने दीजिए। जब हम योगी जी से मिलकर वापिस यहाँ लौट आयें, तब उसके बाद ही आप कोई ऐसा कदम उठाने की बात सोचिए।"

महाराजा बोले—"महोदय, जैसी आपकी इच्छा हो और योगी जी की आज्ञा…"

इस प्रकार के वार्तालाप के बाद विद्वान महोदय योगी जी की ओर चल पड़े। और जब वहाँ पहुँचे तो योगी जी ने कहा—"कहिये, कैसा रहा ? क्या आपने राज्य और अधिकार स्वीकार नहीं किया ? क्या महाराजा से आपको धन की वाञ्छित प्राप्ति हुई ? अब आपकी क्या इच्छा है ?"

विद्वान जी बोले—"महाराज, आपने तो पत्र में बहुत बड़ी बात लिख दी। महाराजा जी तो उसे पढ़कर आपके प्रताप से अपना सारा राज्य और सोने-चांदी तथा हीरों से भरे खज़ाने भी मुझे देने को तैयार हुए। महाराज, मैं तो यह देखकर ही भौचक्का रह गया…"

बात को बीच में काटते हुए योगी जी बोले—"तो आपने लिया क्यों नहीं, आपको धन-दौलत ही तो चाहिए थी ? आप वह ले लेते और आपकी इच्छा पूरी हो जाती।"

विद्वान जी बोले—"नहीं, योगी जी, नहीं, अब मैं समझ गया कि धन-दौलत की अपेक्षा अधिक सुख तो योग से प्राप्त होता है तभी तो महाराजा भी वह सब छोड़कर योग सीखने को उद्यत हो गए। अत: अब मैं भी राजयोग को दत्तचित्त होकर सुनना व सीखना चाहता हूँ। अब आप धन की बात तो छोड़ दीजिए।"

आज संसार में कोटि-कोटि लोग ऐसे हैं जो धन-दौलत को ही अधिक महत्त्व देते हैं और राजयोग की महानता को नहीं समझते। योग द्वारा जो प्रभु-मिलन का अनुभव व सुख प्राप्त होता है, उसे पाने के लिए तो राजा भी अपना राज्य छोड़ने को तैयार हो जाते हैं। योग तो सभी खज़ानों की कुंजी यह रहस्य कोई विरला ही जानता है।

परिवर्तन

ब्र० कु० आत्म प्रकाश, आबू पर्वत

राजस्थान की पर्वतमाला में प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर आकर्षक अरावली पर्वत की गोद में स्थित "अन्तर्राष्ट्रीय राजयोग भवन" में, मई १९८४ को राजयोग शिविर का शुभारंभ हुआ। जिसमें आत्मानुभूति तथा ईश्वरानुभूति अर्थ सायन्स कॉलेज वलसार (गुज०) के प्रिन्सिपल डॉ० श्री प्रभाकर मोरेजी एम० एस० सी० पी० एच० डी० पधारे थे। शिविर के उपरान्त जब उन्हों से वार्तालाप हुआ, तो उन्होंने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि मैंने आज तक इस ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय के बारे में न जाने कितनी उल्टी सुल्टी बातें सुनी थीं जिससे अनेक भ्रांतियां मेरे मन में घर करके बैठी थीं। इस कारण से ही विशेष कार्यक्रम के निमंत्रण पत्र आने पर भी मेरा मन वहाँ जाने से रोकता रहा। कुछ समय के बाद हमारे कॉलेज के एक माजी विद्यार्थी के अटल आग्रह पर मैंने इस शिविर में भाग लेने का निश्चय किया। यहाँ आने का मेरा दृष्टिकोण एकदम भिन्न था, कुछ समझने के बजाय कुछ समझाने का! दूसरी तरफ अनेक भ्रान्तियाँ सुनने से मन मूँझा हुआ था कि आजतक जो बातें सुनी हैं वे सच होंगी या जो इस विद्यालय के माध्यम से सुनाई जा रही हैं वह बातें सच होंगी!

लेकिन जिस घड़ी मैंने राजयोग भवन के आँगन में कदम रक्खे तो मुझे अनोखी शान्ति तथा पवित्रता के प्रकम्पन चुम्बन करने लगे। दिल से आवाज़ आ रही थी कि सचमुच मैं बहुत भाग्यशाली हूँ जो मुझे इस पावन भूमि पर पहुँचने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। जब शिविर के अन्तर्गत ज्ञानचर्चा तथा राजयोगाभ्यास की शिक्षा दी गई तो परिणामत: विभिन्न प्रकार के विचित्र अलौकिक अनुभव हुए जिससे मेरे मन के कपाट खुल गए। तीन दिन की अवधि में ही आत्मा को परमशान्ति की अनुभूति हुई। मन में जो भ्रांतियाँ थीं उन्हों का वास्तविक स्पष्टीकरण विभिन्न प्रवक्ताओं द्वारा प्राप्त हुआ। मन में बार-बार यही संकल्प आता था, काश कि मैं पहले से ही नियमित छात्र बनकर जीवन को दिव्य बनाता तो कितना अच्छा होता! लेकिन इन उल्टे सुल्टे भ्रमों ने जीवन की अनमोल घड़ियों को यूँ ही बरबाद किया। उन्होंके प्रश्नों के जो उत्तर उन्हें प्राप्त हुए उसका संक्षिप्त विवरण पाठकों के लाभार्थ प्रस्तुत करता हूँ—

प्रश्न—राजयोगाभ्यास के लिए ब्रह्मचर्य का पालन अनिवार्य क्यों है?

उत्तर—ब्रह्मचर्य की धारणा बहुत ऊँची धारणा है। ब्रह्मचर्य की शक्ति से मनुष्य महान कार्य कर सकता है। जहाँ गृहस्थ में भी ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया जाता हो, उससे बढ़कर कोई चमत्कार अथवा साहस तथा वीरता का कार्य हो नहीं सकता। ब्रह्मचर्य ऐसी परम औषधि है जो रोग, बुढ़ापे और मृत्यु से मनुष्य को बचाती है और उन्हें शान्ति, स्मृति और आरोग्य देती है। वास्तव में ब्रह्मचर्य बहुत ही अनमोल है, यह तो अमृत ही है। राजयोग में ब्रह्मचर्य की शक्ति मन को एकाग्र करने में मदद करती है। राजयोग में अपना चित्त परमपवित्र परमात्मा पर लगाते हैं अत: जब तक चित्त पावन नहीं होगा वह परम पावन परमात्मा की याद में स्थिर नहीं होगा। इसलिए योग में पवित्रता की आवश्यकता है।

प्रश्न—यहाँ आँखें खोलकर योगाभ्यास क्यों किया जाता है?

उत्तर—आँखें और मन का बहुत गहरा सम्बन्ध है। आँखें जिसे देखती हैं उसी पर मन संकल्प चलाता है। योगाभ्यास करते समय जो अनुभवी व्यक्ति परमात्मा की याद में बैठकर हमें दृष्टि देता है, तो उन्होंको देखने से मन स्वत: ही एकाग्र होता है। आत्मिक स्वरूप में स्थित होने के लिए मदद मिलती है। दूसरी बात हमारा लक्ष्य कर्मयोगी बनने का है न कि कर्मसन्यासी। तो आँखें खोलकर परमात्मा की स्मृति करने का अभ्यास परिपक्व होने से कर्मयोगी सहज बन सकते हैं। तीसरी बात आँखें बंद करके योगाभ्यास करने से नींद अथवा सुस्ती आने की संभावना हो सकती है, जिससे हम निद्राजीत नहीं बन सकते।

प्रश्न—यहाँ बहनों को प्रधानता क्यों दे दी गई है ?

उत्तर—यहाँ बहनें और भाई दोनों को समान महत्त्व दिया गया है । हाँ, ये जरूर है कि बहनें संचालन करने के लिए निमित्त हैं । क्योंकि बहनों में पालना के संस्कार स्वाभाविक होते हैं । बहनें रहमदिल होती हैं जिससे वे माँ का पार्ट बजाने में सफल होती हैं । दूसरा, बहनों में भाईयों की भेंट में सहन-शक्ति ज्यादा होती है । तीसरी मुख्य बात यह है कि द्वापुर युग से सभी ने नारियों की अव्हेलना की है । सन्यासियों ने भी उन्हें नर्क का द्वार कहा है । नारी को सर्पिणी कहकर अनुचित व्यवहार से उन्हों के स्वाभिमान को समाप्त किया है । लेकिन जब परमात्मा सृष्टि पर आते हैं तो नारी जाति का उत्थान करते हैं । उन्हें अपने वास्तविक शक्ति-स्वरूप की पहचान देकर उनके द्वारा स्वर्ग के द्वार खोलते हैं । इसी तरह वे भारत की शान बढ़ाती हैं इसलिए बहनों को प्रधानता दी गई है ।

प्रश्न—यहाँ लसन (Garlic) और प्याज (Onion) का सेवन त्याज्य क्यों है ?

उत्तर—वैसे तो लसन और प्याज में शरीर के लिये आवश्यक रासायनिक पदार्थ पाये जाते हैं इसलिए डाक्टर भी उसका भोजन में विशेष महत्त्व बताते हैं । लसन और प्याज तमोप्रधान अन्न में अन्तर्निहित है । देवताओं को भी इसका भोग नहीं लगाते हैं । जबकि राजयोग का लक्ष्य ही है सतोप्रधान बनने का तो इन तामसिक चीज़ों को सेवन क्यों करें । ये उत्तेजक वस्तुएँ पवित्रता के पालन में विघ्न स्वरूप बनते हैं इसलिए ये त्याज्य हैं ।

प्रश्न—सुना है यहाँ पति-पत्नी को भाई बहन बनाया जाता है, क्या यह सच है ?

उत्तर—वास्तव में यहाँ पति-पत्नी को भाई वहन नही बनाया जाता है, लेकिन एक पिता परमात्मा की सन्तान के नाते पति-पत्नी को पवित्रता का व्यवहार सिखाया जाता है । यहाँ स्त्री पुरुष को उसके मूल स्वरूप का ज्ञान दिया जाता है कि तुम यह देह नहीं, पवित्र आत्मा हो । ये पति-पत्नी तो दहिक नश्वर नाते हैं परन्तु अब रूहानी नाते में रहो ।

प्रश्न—परमात्मा सृष्टि पर आए हैं, इसका क्या प्रमाण है ?

उत्तर—इसका प्रमाण है हमारा अनुभव···हमने उसे इस धरा पर आये दिव्य नयनों से देखा है । उसकी उपस्थिति का पूर्णतया अनुभव किया है । जब वे परकाया प्रवेश करते हैं तो उस शान्ति-सागर की शान्ति का अनुभव हमें परमशान्ति के रूप में होता है । उनकी दृष्टि पाकर हमें अशरीरीपन का अनुभव होता है । आप भी ये अनुभव कर सकते हैं । उनके महावाक्यों द्वारा उनके ज्ञान सागर त्रिकालदर्शी होने का आभास मिलता है ।

प्रश्न—परमात्मा सर्वशक्तिमान होकर प्रेरणा से ज्ञान क्यों नहीं देते ?

उत्तर—वे प्रेरणा से ज्ञान दे सकते हैं, परन्तु प्रेरणा प्राप्त करने वाले सम्पूर्ण रूप से उन प्रेरणाओं का ग्रहण नहीं कर सकते क्योंकि उनकी प्रेरणाओं को प्राप्त करने के लिए सम्पूर्ण पवित्रता की आवश्यकता है । परन्तु कलियुग में कोई भी आत्मा सम्पूर्ण पावन नहीं होती । इसलिए यदि परमात्मा प्रेरणा से ज्ञान दे तो लिखने वाले बहुत मिश्रण कर देंगे जिससे सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकेगा । इसलिए सम्पूर्ण सत्य ज्ञान देने के लिए भगवान को शिक्षक बनकर आना पड़ता है ।

प्रश्न—सभी ब्रह्मचर्य का पालन करेंगे तो सृष्टि कैसे चलेगी ?

उत्तर—किसी भी धारणा को सभी लोग पालन नहीं किया करते हैं । जो लोग प्रभुमिलन का अनुभव करना चाहते हैं वे ही इस धारणा को अपनायेंगे । आपने कभी यह नहीं सोचा होगा कि सभी डाक्टर बनें तो क्या होगा···

दूसरी बात, अब इस सृष्टि को चलना ही नहीं है । हम विनाश के किनारे खड़े हैं । इस विनाश के समय ही परमात्मा 'पवित्र बनो' यह आज्ञा करते हैं ।

प्रश्न—जबकि मनुष्यात्मा शरीर छोड़ने के बाद दूसरी योनि में प्रवेश करती है, तो जनसंख्या में वृद्धि क्यों हो रही है ?

उत्तर—वास्तव में मनुष्य आत्मा दूसरी योनि में नहीं प्रवेश करती । मनुष्य-जन्म में जो भी अच्छे या बुरे कर्म किये जाते हैं, उसका फल भी मनुष्य

के ही योनि में सुख या दुख के रूप में प्राप्त होता है। इस सृष्टि रंगमंच पर आदिकाल से अन्त तक पार्ट बजाने वाली मनुष्यात्माओं की संख्या लगभग ५५० करोड़ है और हर आत्मा परमधाम घर से अपने निश्चित समय पर ही पार्ट बजाने आती है। एक बार जो आत्मा परमधाम से नीचे उतरती है वह अन्तसमय तक यहाँ ही पार्ट बजाती रहती है। जो सभी आत्माएँ परमधाम में निवास करती हैं और अपने-अपने समय पर वहाँ से आती रहती हैं इसलिए दिन प्रतिदिन जनसंख्या बढ़ती रहती है।

प्रश्न—क्या राजयोग द्वारा विकारों पर सम्पूर्ण विजय प्राप्त की जा सकती है?

उत्तर—हाँ, केवल राजयोग द्वारा ही यह सम्भव है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण आप इस ईश्वरीय विश्व-विद्यालय में देख ही रहे हैं। क्योंकि राजयोग में ही आत्मा देह-भान से मुक्त होती है और इस कारण विकारों से मुक्त हो जाती है। देहभान ही सभी विकारों का बीज है।

प्रश्न—आखिर विनाश कब होगा?

उत्तर—विनाश के सीन तो आप देख ही रहे हैं। विश्व के अनेक देशों में गृह-युद्ध छिड़ा हुआ है और स्पष्ट दिखाई दे रहा है कि विश्व-युद्ध से विश्व को कोई बचा नहीं सकेगा। ये सब प्रारम्भ हो चुका है। इस शताब्दी के समाप्त होते-होते इस विश्व का पूर्णतया नव-निर्माण हो चुकेगा। तमो-प्रधान व आसुरी सम्प्रदाय नष्ट हो जाएगी और देवत्व का उदय प्रारम्भ हो जाएगा।

प्रश्न—क्या यह राजयोग विश्व को नई दिशा देने में मददगार बन सकेगा?

उत्तर—राजयोग द्वारा ही विश्व को नई दिशा मिल रही है। वह दिन दूर नहीं जबकि विश्व के सभी लोग राजयोग की आवश्यकता महसूस करेंगे और इसे ही जीवन दर्शन के रूप में स्वीकार करेंगे। राजयोग द्वारा ही मनुष्य को सच्ची सुख शान्ति की अनुभूति होगी और मुक्ति, जीवनमुक्ति का पथ मिलेगा।

अन्त में उन्होंने कहा कि भाईजी, मेरे जीवन में नई ज्योत जग गई जिससे जीवन अलौकिक तथा दिव्य अनुभव हो रहा है। जो मूँझा हुआ मन था वह मौज में उड़ान भर रहा है। मेरे मन रूपी पन्छी को ज्ञान-योग के पंख प्राप्त हुए। इस तीन दिनों के दिव्य अनुभवों ने मेरा दिल जीत लिया जिससे मेरा जीवन ही परिवर्तन हो गया। गम के बादल जीवन से हट गए और ज्ञानामृत की बरसात से जीवन में नई हरियाली की बहार छा गई। कितना न शुक्रिया अदा करूँ उस परम प्यारे शिव पिता का जिसने मुझे कलियुगी रूपी रात्री के घोर अंधियारे से निकालकर ज्ञान सूर्य की किरणें प्रदान करके सतयुगी प्रभात में खड़ा किया। सदा मन में यही गीत की पंक्तियाँ उमड़ती हैं—"पाना था सो पा लिया, अब कुछ पाने का नहीं रहा"।

मैं अन्त में शिवबाबा से यही वायदा करता हूँ कि जो मेरे आत्मिक बन्धु भौतिकता या आडम्बरों में या भ्रांतियों में फँसे हुए हैं उनको यह सत्य मार्ग बताने की सेवा में ही जीवन की अन्तिम अनमोल घड़ियाँ बिताकर जीवन को सफल बनाऊँगा। □

(पृष्ठ ६ का शेष)

सर्वोपरि व अति सूक्ष्म है। कई मनुष्य सम्पूर्ण त्याग करने के बाद भी मन के अहम् को नहीं मार पाते, फलस्वरूप उनका त्याग सम्पूर्ण फलदायक नहीं रह जाता। क्योंकि अहम् भाव विष तुल्य है जो त्याग रूपी अमृत में मिलकर उसे भी जहरीला बना देता है। अतः हमारा त्याग व हमारी महानता पूर्ण निर्मल व निरहंकारी होने में है। योगियों का अहंकार, मनुष्यों के मन में योग के प्रति श्रद्धा को नष्ट कर देता है। अतः योगियों का चित्त पूर्ण निर्मल हो, ताकि उनके बोल दूसरों पर सुख की बरसात करें।

इस प्रकार त्याग को अपने जीवन का अविनाशी अंग बनाकर सादगी से जीवन का शृंगार करके, जब हमारे मस्तक से दिव्य तेज अविरल गति से प्रवाहित होगा तो उसकी चमक सारे जग को चमकायेगी। उसकी चमक सभी आत्माओं को ईश्वर की ओर प्रेरित करेगी। उसकी चमक के समक्ष सम्पूर्ण चन्दा की चमक भी साधारण लगेगी। ऐसे दिव्य तेज को मस्तक पर धारण करके, अब शीघ्र ही हमें इस धरा पर आये हुए सम्पूर्ण तेजोमय परमपिता को प्रत्यक्ष करना है।

□□

शांति की शक्ति और क्रांति

ब्र० कु० रमेश गामदेवी, बंबई

द्वितीय विश्व शांति सम्मेलन (१९८४) के उद्-घाटन समारोह का प्रसंग था। मुझे प्रातः-कालीन सत्र में 'शान्ति की शक्ति' इस विषय पर भाषण करना था। मेरे पहिले जर्मनी के एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक का भाषण था। उन्होंने विज्ञान की शक्ति कितनी विनाशकारक है उसके बारे में अपने विचार प्रस्तुत किये। विज्ञान के द्वारा उपलब्ध साधनों और शस्त्रों का अंदाज भी बताया। उनके प्रवचन से सबको विज्ञान की विनाशकारक शक्ति का पूर्ण परिचय हुआ। इस सृष्टि पर विज्ञान के द्वारा अनेक प्रकार की क्रांतियाँ हुईं जैसे कि वाष्प क्रांति (Steam Revolution), बिजली की क्रांति (Electric Revolution) और अणु शक्ति द्वारा क्रांति (Atomic Revolution) इत्यादि। उस अवसर पर मुझे ऐसा विचार आया कि आज के विश्व को शान्ति की शक्ति क्या है और शान्ति की क्रांति विश्व में कैसे होने वाली है वह विदित नहीं है।

परमपिता परमात्मा को सभी धर्म वाले ज्ञान का सागर मानते हैं अर्थात् वह ज्ञान का भंडार है। इसी तरह वह शान्ति का सागर है यह भी लोग मानते हैं। परमात्मा के पास जो ज्ञान है उसका एक स्वरूप है गीता क्योंकि गीता में ही 'श्रीभगवानु-वाच' शब्द है। ऐसे ही शांति के सागर परमात्मा की रचना अर्थात् सच्ची शांति क्या है उसके बारे में लोग नहीं जानते और इस कारण लोग शान्ति की खोज में इधर उधर भटकते हैं। यदि विश्व को, शान्ति के विविध स्वरूप, गुण, शक्ति आदि का ज्ञान होता तो आज विश्व का इतिहास ही दूसरा होता।

शान्ति—यह स्वधर्म है। शान्ति और पवित्रता इन दोनों दवी गुणों की धारणा के आधार पर बना हुआ धर्म, ऐसे धर्म को आचरण करने वाले सतयुगी और त्रेतायुगी समाज में, धर्म के कारण शान्ति थी। शान्ति रूपी आत्मा का स्वधर्म में लोगों का विश्वास और श्रद्धा थी और धर्म के नाम पर किसी प्रकार के झगड़े नहीं थे। परन्तु जब देह के आधार पर तथा मानव द्वारा निर्मित धर्मों की स्थापना हुई तो धर्म ही अशान्ति का कारण बन गया। अतएव यदि विश्व में धर्म के क्षेत्र में शान्ति लाना हो तो शान्ति को वैश्विक धर्म बनाना आवश्यक है। यदि शान्ति का वैश्विक धर्म के रूप की शक्ति का परि-चय मानव को हो जाये तो धर्म और विज्ञान तथा धर्म और आध्यात्मिकता के बीच का संघर्ष ही खतम हो जाए। वास्तविक में शान्तिरूपी स्वधर्म मानव के चरित्र निर्माण के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकता है। परन्तु आज के धर्मनेताएं शान्ति के धर्म की शक्ति से अनजान हैं और इसी-लिये धर्म के नाम पर ज्यादा अशान्ति फैलाते हैं। धर्म के क्षेत्र में क्रांति लाने के लिये शान्ति की शक्ति का धर्म और आध्यात्मिकता के स्वरूप को विश्व के सामने स्पष्ट करना जरूरी है।

शान्ति स्वदेश भी है। हम सब आत्माएं शान्ति-धाम की निवासी हैं अर्थात शान्ति-धाम हम सब आत्माओं का मूलवतन है, इस प्रकार शान्ति का स्वदेश के रूप में किसी को ज्ञान नहीं है। आज के वैज्ञानिकों को या भूगोल-शास्त्रज्ञ को सूर्य, चन्द्र, तारागण का ज्ञान है परन्तु इस विश्व के कोई भी भूगोल शास्त्र में शान्ति-धाम यह एक शक्ति-स्थान है इसका वर्णन नहीं मिलता। परमात्मा भी इसी शान्ति-धाम का रहवासी है यह भी न जानने के कारण धर्मनेताओं ने परमात्मा को कण-कण में व्यापक कह दिया है। शान्तिधाम को न जानने के कारण इस सृष्टि को ही सबने अपना स्वदेश समझ लिया है और विश्व की विभिन्न आत्माओं को अनेक नाम, रूप, देश वाले समझकर विश्व के टकड़े-टुकड़े बना दिये और इस तरह एक-विश्व

की भावना मानों कि खत्म-सी हो गई। शान्ति-धाम का ज्ञान होता तो विश्व में एकता की संभावना बहुत जल्दी हो सकती थी। शान्तिधाम का ज्ञान होता तो आज विश्व में अशान्ति न होती। विश्व में जो आज शास्त्रों के पीछे अरबों रुपयों का खर्च होता है, शान्ति-धाम का ज्ञान होता तो, यह खर्च बंद हो जाता अर्थात् इतनी आश्चर्यकारक शक्ति शान्तिधाम के ज्ञान के अंदर है। शान्ति-धाम का सच्चा ज्ञान होता तो आज धर्मों के अन्दर जो एक प्रश्न है कि आत्मा परमात्मा में लीन होती है या नहीं, यह प्रश्न ही नहीं उठता। मैं भारतीय हूं इस शब्द का अर्थ है मैं भारत देश का रहने वाला हूं, उसी प्रकार शांति-धाम, ब्रह्मलोक का ज्ञान यदि होता तो 'अहम् ब्रह्मोऽस्मि' शब्दों का अर्थ मैं परमात्मा हूँ ऐसा नहीं करते बल्कि मैं शान्तिधाम का रहवासी हूँ ऐसा करते अर्थात् तत्व-ज्ञान के विषय में भी एक क्रांतिकारक परिवर्तन होता।

जीवन में शान्ति की शक्ति बहुत आवश्यक है। शान्ति में ही जीवन का विकास है। जीवन-विकास में सहायक ऐसी शान्ति की शक्ति को समाज शास्त्रज्ञ भी नहीं जानते। शान्ति यह शान्ति के सागर परमात्मा के अस्तित्व का परिचय देती है। योग में शान्ति की अनुभूति एक सुन्दर अनुभूति है। शान्ति में आत्मा को शक्ति भरने की ताकत है। जैसे व्यायाम से शारीरिक शक्ति बढ़ती है उसी प्रकार शान्ति की अनुभूति अर्थात् योग द्वारा आत्मा की शक्ति बढ़ती है। इस अनुभव के आधार पर विश्व में जो आज अनेक प्रकार के व्यायामशालाएं, अस्पताल (Hospitals) या आनंद आदि के क्लब, सिनेमागृह इत्यादि बने हैं उसके बदले लोगों ने शान्ति केन्द्रों के रूप में राजयोग-शिक्षा विद्यालय बनाये होते और सामान्य क्लब के बदले शान्ति-कुंड की रचना करते जहां पर विभिन्न प्रकार की आत्माएं जाकर शान्ति की शक्ति के द्वारा आत्मोन्नति की शक्ति प्राप्त करती। आज विश्व में व्यायामकेन्द्र या क्लब के बदले शान्तिकेन्द्र और शान्ति-कुंड की ज्यादा आवश्यकता है। शान्ति की शक्ति यह एक परमात्मा की दुआ है इस बात का ज्ञान होता तो दवा और दुआ का संगम होता और आज के वैद्यकशास्त्र (Medical science) में क्रांतिकारी परिवर्तन होता। मानसिक अशान्ति या तनाव (Tension) के कारण ९२% प्रतिशत रोगों की उत्पत्ति होती है अर्थात शान्ति की शक्ति में ९२% प्रतिशत रोगों को दूर करने की शक्ति है। इस प्रकार शान्ति की शक्ति का तन्दुरुस्ती के ऊपर जो परिणाम है उसका ज्ञान यदि मनुष्यमात्र को होता तो विश्व में शारीरिक रोगों का उन्मूलन हो जाता। सतयुगी सृष्टि में औसत आयु १५० वर्ष की है इसका कारण यही है कि वहां पर मानसिक अशान्ति नहीं है अर्थात वहाँ के लोग शान्ति की शक्ति को यथार्थ रूप से जानते थे।

शान्ति यह एक धन भी है। इस धन के आगे दुनियावी धन कुछ काम का नहीं है। अशान्त मनुष्य कितना भी भौतिक धन से भरपूर हो फिर भी उसे सुख प्राप्त नहीं होता इसलिये तो संस्कृत में एक प्रश्न है "अशांतस्य कुतोः सुखम्।" शान्ति में ही व्यापार और उत्पादन दोनों बढ़ते हैं और इसीलिये आज के विश्व को औद्योगिक शान्ति (Industrial peace) की बहुत आवश्यकता है। कार्ल मार्क्स ने भी लिखा है कि "औद्योगिक अशान्ति के कारण ही विश्व में अंतिम क्रांति होगी और अंत में मजदूरों (Labour) की विजय होगी।" औद्योगिक अशान्ति ही गृह-युद्ध (Civil wars) के निमित्त कारण बनेगी। आज के विश्व में उत्पादन शक्ति (Production) द्वारा ही धन का निर्माण होता है। इस प्रकार औद्योगिक शान्ति की आर्थिक परिवर्तन को उत्पन्त करने वाली (Prducer) है इस बात का अनेक अर्थ शास्त्रज्ञों ने समर्थन किया है। शान्ति की शक्ति को यथार्थ रूप से पहचानने से धन और अर्थ व्यवस्था के क्षेत्र में बहुत बड़ी क्रांति आ सकती है। आज धन और चरित्र के बीच में जो ध्रुव समान अंतर है वह खत्म हो जायेगा। धन माया का रूप न रहकर शान्ति की शक्ति का एक भौतिक स्वरूप बन जायेगा। इसी कारण सतयुग में धन, वैभव और आनन्द का स्रोत बन जाएगा और आज धन के नाम पर जो अशान्ति, झगड़े इत्यादि हैं सब खतम हो जायेंगे।

एक लघुकथा है कि शान्ति-दूतों की नामावली

तैयार करने के लिये कहा था। नामावली में पहिला नाम किसका हो इस बात पर झगड़ा हो गया और शान्तिदूतों की वह सभा बरखास्त हो गई। आज के विश्व में यह एक कटु सत्य है कि लोग शान्ति के नाम पर और शान्ति के लिये युद्ध करते हैं, शान्ति-सैनिकों की रचना करते हैं। वास्तव में आज के विश्व में शान्ति सैनिक नहीं लेकिन शान्ति दूतों की आवश्यकता है। शान्ति-दूत ही फरिश्तों की तरह शान्ति का साक्षात्कार उसकी अनुभूति के द्वारा सबको करा सकेंगे।

शान्ति की अपनी भाषा है। मौन की एक शक्ति है। विश्व-शान्ति सम्मेलन में हरिद्वार के स्वामी सत्यमित्रानंद जी जो कि एक प्रखर विद्वान और वक्ता हैं, उपस्थित थे। उन्होंने अपनी शान्ति की शक्ति बढ़ाने के लिये एक वर्ष का मौन व्रत धारण किया था। महात्मा गांधी जी हफ्ते में एक दिन मौन व्रत का पालन करते थे। मौन यह शान्ति की भाषा का प्रतीक है। शब्दों के मौन के कारण स्वामी जी या महात्मा गांधी आदि बहुत आगे आये। पवित्र प्रवृत्ति द्वारा, मन के मौन द्वारा जो आत्मोन्नति हो सकती है उसका अंदाजा लगाना मुश्किल है। मन मौनरूपी आत्मिक शान्ति द्वारा बहुत बड़ा आध्यात्मिक परिवर्तन जीवन में लाता है क्योंकि उसी से सभी प्रकार की लालसाएं और वासनाएं खतम होती हैं। कामना रहित मनुष्य ही जीवन में मुक्ति और जीवन-मुक्ति पा सकता है। मौन की भाषा वैश्विक भाषा है। उस भाषा में मानव, पशु-पक्षी आदि सबसे बातें कर सकता है क्योंकि मौन की शक्ति का उदयस्थान हृदय है। मौन की शक्ति के अभाव के कारण आज मानव भावनाशून्य हो गया है और उसी कारण आज भाई, भाई का खून करने के लिये भी तैयार हों जाते हैं। कौटुंबिक अशान्ति हर घर में है क्योंकि घर में मौन की भाषा का प्रयोग नहीं करते। मौन से आत्मीयता बढ़ती है, गलत-फमी खतम होती है। मौन की शक्ति एक तावीज़ है जिससे व्यक्ति को वचन-सिद्धि मिलती है।

इस प्रकार शान्ति की शक्ति का सर्वांगीण विचार आज तक नहीं हुआ है। शान्ति के सागर शिव परमात्मा ने हम बच्चों को शान्ति के दूत बनाने अर्थ शान्ति के अनेक स्वरूपों की विधि और विधान स्पष्ट किये हैं। शान्ति-सम्मेलन इत्यादि द्वारा शान्ति का यह संदेश विश्व में फैलाना है तब ही लोग शान्ति को यथार्थ रूप में समझेंगे, मानेंगे और उसको प्राप्त करने का पुरुषार्थ करेंगे।

●●

हम दुनिया नई बसाएंगे

ब्र० कु० मोहन, अमृतसर

स्थाई : हम दुनिया नयी बनायेंगे
तन मन सेवा में लगायेंगे
चलेंगे शिव पिता की मत पर
स्वर्ग धरा पर लायेंगे।

(१) त्याग तपस्या और सेवा,
विश्व शान्ति लायेगी
युगों से प्यासी रूहें
शिव से मिलन मनायेंगी
अमृत भरे कलश से सबको
दिव्य अमृत पिलायेंगे। हम दुनिया नयी···

(२) देश धम और दुःखी मानव का
बनना हमें सहारा है
जन-जन को पावन बनादो
शिव ने आज पुकारा है
बुझा हुआ हर आत्म दीपक
ज्ञान की ज्योति जगायगे। हम दुनिया नयी···

(३) हमारे हर कर्म से होगा
अब चरित्र का उत्थान
योगी जीवन देख हमारा
मानव बनेगा देव महान
सर्व गुणों से भरकर झोली
हर जीवन को सजायेंगे। हम दुनिया नयी···

(४) नये विश्व अब देव लोक का
करना नव निर्माण है
भक्त जन भटके मानव को
देनी शिव की पहचान है
बिछड़ी हुयी आत्माओं को
शिव से हम मिलायेगें। हम दुनिया नयी···

दुःख और अशान्ति भी संक्रामक रोग हैं इनसे बचने के सहज उपाय

लेखक – ब्र० कु० कुसुम, कलकत्ता

आज संसार में अनेक प्रकार के रोग दिखाई देते हैं। उन रोगों में से कुछ रोग ऐसे भी हैं जो कि रोगी के निकट बठने वाले को भी लग जाते हैं। हैज़ा, चेचक, प्लेग, टी० बी० आदि रोग इसी प्रकार के हैं। इन्हें संक्रामक रोग कहा जाता है। सभी रोगों के कीटाणु मनुष्य के शारीरिक स्वास्थ्य को बहुत हानि पहुँचाते हैं। इसलिए यदि कोई व्यक्ति को यह रोग हो जाते हैं तो जल्दी से जल्दी इनको मिटाने का उपाय करते हैं जिससे मनुष्य का स्वास्थ्य ठीक हो जाए और वह मौत के मुख में जाने से बच जाए। परन्तु वर्तमान समय एक और भी विचित्र एवं ज़बरदस्त संक्रामक रोग ने मनुष्य मात्र का घेरा डाला हुआ है जिसका नाम दुःख-अशान्ति है। अब हम देखेंगे कि इसे संक्रामक रोग क्यों कहा गया है और इससे छुटकारा पाने का क्या इलाज है—

दुख: अशान्ति रूपी रोग के कीटाणु

आज कोई भी परिवार, गली, गाँव अथवा शहर ऐसा नहीं है जहाँ कि यह भयानक रोग न हो। इस रोग के कीटाणु हैं—काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार। ये कीटाणु मनुष्य को केवल शारीरिक कष्ट ही नहीं बल्कि आत्मिक कष्ट पहुँचाने में भी पूरे सहायक हैं। यद्यपि ये अत्यन्त सूक्ष्म हैं और देखे भी नहीं जा सकते और ये इतने पिषैले हैं कि जहरीले नाग से भी अधिक इनके काटने का परिणाम होता है। इस दुःख-अशान्ति रूपी रोग को मिटाने के लिए मनुष्य भान्ति-भान्ति के प्रयत्न करता है लेकिन देखा जा रहा है कि ज्यों-ज्यों दवा करते हैं त्यों-त्यों यह रोग एक संक्रांमक रोग की तरह दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है।

हम दुःख अशान्ति को सक्रांमक रोग क्यों मानते हैं ? आप देखिये कि यों तो बहुत परिवार वालों को क़हते सुना है कि 'हम तो तन, मन और धन सभी प्रकार से सुखी है, हम स्वर्ग में ही हैं।' परन्तु हम यह देखते हैं कि जब उनके किसी सम्बन्धी के यहाँ या पड़ोसी के यहाँ किसी की मृत्यु हो जाती है तो अपने को सुखी समझने वाला वह परिवार भी दुःखी होने लगता है। अर्थात, मृत्यु के कारण शोकाकुल लोगों से जब उस सुखी परिवार के लोग मिलते हैं तो उनके सम्पर्क से वे भी उसी भान्ति अशान्त हो जाते हैं जिस भान्ति कि किसी शारीरिक संक्रामक रोग वाले के सम्पर्क में आने से स्वस्थ मनुष्य भी रोगी हो जाता है। इसी प्रकार, यदि कोई सुखी मनुष्य किसी सूखा-ग्रस्त इलाके के किसी भूखे-प्यासे भिखारी के नेत्रों से आसुओं की धारा बहते देखता है तो उसके मन में भी अवश्य ही दुख और अशान्ति पैदा हो उठती है, चाहे वह अशान्ति उसे थोड़े ही समय रहे। कई बार तो कोई व्यक्ति किसी दूसरे को रोता देखकर स्वयं भी रोने लगते हैं।

दुःख-अशान्ति रूपी रोगों के लिए डाक्टर कौन ?

अतः स्पष्ट दिखाई दे रहा है कि इस कलियुगी दुनिया में क्या गरीब क्या साहूकार, सभी मनुष्य दुःख-अशान्ति से व्याकुल हो रहे हैं। अब प्रश्न उठता है कि इस रोग को ठीक कैसे किया जाए ? अवश्य ही इसी रोग को ठीक करने वाले डाक्टर के पास जायेंगे तभी तो इस रोग के मूल, इन काम-क्रोध आदि कीटाणुओं को नाश करने वाली कोई अच्छी दवा दे सकेगा। नहीं तो, यदि हम आँख का इलाज फेफड़े के डाक्टर के पास जाकर करायेंगे तो भला आँख कैसे ठीक होगी ? जो जिस रोग का डाक्टर है, उसी के पास ही तो जाना चाहिए ?

इसी प्रकार, इस विचित्र दुःख-अशान्ति जैसे

आत्मिक रोग को ठीक करने वाला डाक्टर भी अलग है जो कि आत्मिक सर्जरी (Spiritual surgery) अथवा आत्मा का अप्रेशन और इन्जैक्शन जानता है। मनुष्य 'हे प्रभु' 'हे परमात्मा,' 'हे शान्ति-दाता' 'हे दुखः हर्त्ता-सुख कर्त्ता' आदि नामों से बड़े प्रेम सहित विनय करते हुए पुकारता है और कहता है कि "हे भगवान, तुम्हीं मेरे दुःख-अशान्ति रूपी रोग को हर सकते हो।" तो सिद्ध है कि जरूर वही परमपिता परमात्मा जैसी शक्ति ही इस बीमारी को दूर कर सकती है। अर्थात वही हमारी आत्माओं का इलाज करने के लिए ऊँचे से ऊँचा अजर-अमर अविनाशी सर्जन (Surgeon) है जो कि हमारे सभी दुःखों का इलाज करके सुख देता है। परन्तु अब प्रश्न उठता है कि इस डाक्टर से भेंट किस समय, कैसे और कहाँ की जाय क्योंकि प्रत्येक डाक्टर के मिलने का समय तो होता ही है। वह है कलियुग के अन्त और सतयुग के आदि का संगम अर्थात जब विकारों के कारण दुःख अशान्ति रूपी भयानक रोग बहुत ज़ोरों से फैल जाता है तथा सभी आत्माएँ दुःखी हो तड़पने लगती हैं तो परमपिता परमात्मा स्वयं आकर धीरज बँधाते हुए इस दुःख और अशान्ति रूपी रोग को दूर भगाकर सभी आत्माओं को सुखी बनाते हैं। इसके लिए वे कई प्रकार के उपाय बताते हैं।

प्रथम तो वह अपने से भेंट करने के लिए अपना यथार्थ परिचय देते हैं क्योंकि जब तक उस डाक्टर का नाम, रूप, धाम, गुण, कर्त्तव्य आदि नहीं मालूम होगा तो कैसे उसके पास पहुँच सकते हैं? यही कारण है कि अभी तक लोग इस रोग द्वारा पीड़ित हैं। वरना तो वे फौरन जाकर उसके पास इलाज करा लेते, परन्तु रास्ता न जानने के कारण उसी को बुलाते हैं कि—"हे प्रभू, तुम आओ और मेरे दुःख को हरो।" आज जब कि इस रोग ने भयानक रूप धारण किया है तो यह भोला भण्डारी, दया का सागर, प्रेम, आनन्द, सुख और शान्ति का सागर इलाज करने इस सृष्टि-मंच पर अनेकों सम्बन्धों से हमें मिलने आ पहुँचा है और उसने अपना परिचय भी दिया है। भगवान कहते हैं—"मेरा नाम है कल्याणकारी शिव, रूप हैं ज्योति-बिन्दु, धाम है परमधाम और मुझे 'प्रेम का सागर' 'आनन्द का सागर', 'शान्ति का सागर,' 'ज्ञान का सागर', अथवा 'सुख-शान्ति का दाता' कहा गया है। मेरे तीन दित्य कर्त्तव्य हैं—ब्रह्मा के द्वारा नयी, सतयुगी देवी एवं सुख सम्पन्न सृष्टि की स्थापना कराना, विष्णु चतुर्भुज द्वारा सतयुगी सृष्टि का पालन कराना और शंकर द्वारा पुरानी, पतित, कलियुगी, दुनिया का विनाश कराना। अब सभी मनुष्यात्माओं के प्रति अविनाशी डाक्टर अथवा सर्जन परमात्मा की आज्ञा है कि यदि दुःख अशान्ति रूपी संक्रामक रोग से छूटना चाहते हो तो निम्न-लिखित सहज उपाय करो।

(i) अपने आपको शरीर से अलग एक ज्योति बिन्दु, चेतन, अविनाशी आत्मा समझो।

(ii) मुझ परमात्मा में पूर्ण निश्चय करके स्वयं को मेरा वत्स मानकर मेरे उपर्युक्त परिचय से मुझे निरन्तर याद करो।

(iii) ब्रह्मचर्य को धारण कर पूर्ण पवित्र बनो तथा दैवी गुणों की धारणा करो।

(iv) विशेष लाभ लेने के लिए ईश्वरीय विश्व-विद्यालय जो कि रूहानी हास्पीटल भी है वहाँ पधार कर ज्ञान का इन्जेक्शन प्राप्त करो और जल्दी से जल्दी पाँच विकारों से भरपूर इस रोग को दूर करो। नहीं तो, फिर मैं अपने समय पर वापिस अपने परमधाम चला जाऊँगा। तब फिर मुझ द्वारा कोई सहज एवं मधुर ज्ञान-योग रूप औषधि प्राप्त नहीं कर सकोगे। इससे अच्छा रहेगा कि हे आत्माओ, इस संसार की वर्तमान समय की खतरनाक हालत को देखते हुए स्वयं को पवित्र बनालो तो आने वाली सतयुगी सम्पूर्ण सुखी दुनिया में राज्य-भाग्य प्राप्त कर सकोगे।" **अभी नहीं तो फिर कभी नहीं।"**

□□

आध्यात्मिक जगत

ब्र० कु० बल्देवराज गुप्ता, किशनपुरा, फिरोजपुर

जिस प्रकार गुरुत्वाकर्षण (Gravity) के सिद्धान्त से सारा जगत सम्बन्धित है। एक छोटे से अणु से लेकर बड़े से बड़े ग्रह तक सभी आपस में बंधे हुए हैं। अर्थात् धरती के चारों ओर चन्द्रमा घूम रहा है। यानी चन्द्रमा धरती की ओर खिचा हुआ है और धरती चन्द्रमा सहित सूर्य के गिर्द घूम रही है। सूर्य अपने अन्य ग्रहों के साथ मिलकर आकाश गंगा में स्थित एक बहुत बड़े सूर्य के गिर्द घूम रहा है। अर्थात् इस भौतिक विश्व का एक भी कण व्यक्तिगत रूप से स्वतन्त्र नहीं है। इसी प्रकार आध्यात्मिक जगत भी रूहानी स्नेह के आकर्षण में बंधा हुआ है। हम सब आत्माएं हैं और इस सृष्टि रूपी रंगमंच पर इस पंचभौतिक देह को धारण कर अपना-अपना पार्ट बजा रहे हैं। चाहे कितना भी कोई व्यक्ति अपने आपको अलग-अलग देश का कहे या अलग-अलग जाति का कहे, या गोरे-काले आदि के रंग का भेद महसूस करे या अलग-अलग भाषा बोलते हों लेकिन आखिर तो वे सब आत्माएं ही हैं। और विश्व की सभी आत्माएं एक ही परमपिता परमात्मा की सन्तान होने के नाते परमप्रिय परमपिता परमात्मा के स्नेह में बंधी हुई हैं। यदि कोई ऐसा कहे कि अलग-अलग धर्म की आत्माएं अलग-अलग अपने धर्म पिता, इब्राहिम, बुद्ध; क्राइस्ट, राम, कृष्ण, गुरु नानक देव आदि के स्नेह में बंधी हुई हैं, तो यह धर्मपिता भी उसी निराकार ज्योतिस्वरूप परमात्मा के स्नेह में बंधे हुए हैं। यानि वो अलग धर्म की आत्माएं अपने-अपने धर्मपिता के ज़रिए भी परमात्मा से ही सम्बन्धित हैं। अतः यही कहना होगा कि जिस प्रकार विश्व का एक-एक कण भौतिकता की दृष्टि से गुरुत्वाकर्षण से परस्पर सम्बन्धित है उसी प्रकार समस्त विश्व आध्यात्मिकता की दृष्टि से आत्मिक स्नेह के आकर्षण से परस्पर सम्बन्धित है। अतः यदि किसी व्यक्ति के अन्दर स्नेह की भावना नहीं है या ईर्षा, द्वेष, या बदले की भावना है या टकराव की भावना है तो यही कहना होगा कि वह व्यक्ति आध्यामिक नहीं है। आध्यात्मिकता ऐसी भावनाओं से परे है।

आध्यात्मिकता का क्षेत्र असीमित है। किसी भी प्रकार की दीवार से विभाजित नहीं है। यदि कोई कहे कि मैं हिन्दू धर्म का हूँ या बुद्ध धर्म का हूँ, सिक्ख व ईसाई धर्म का हूँ तो उससे भी उस धर्म का क्षेत्र सीमित हो जाता है। धर्म की दीवार समाज के कुछ व्यक्तियों को समाज से अलग कर देती है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हर धर्म में आध्यात्मिकता है लेकिन जब हम धर्म की दीवारों का या जाति-पात की दीवारों की उलंघना कर आध्यात्मिकता के खुले आंगन में आ जाते हैं तो धर्म आध्यात्मिकता के सागर में विलीन हो जाता है और अपना अस्तित्व खो देता है। अर्थात् जिस प्रकार पर्वतों से निकली हुई नदियां हज़ारों मीलों का सफर तय करके जब सागर में समा जाती है तो अपना अस्तित्व खो देती हैं। इसी तरह जब कोई भी व्यक्ति चाहे किसी भी धर्म का, किसी भी जाति का, किसी भी देश का हो जब आध्यात्मिकता के सागर में विलीन हो जाता है तो वह भी अपने धर्म, देश, जाति आदि का अस्तित्व खो देता है। अतः यदि हम इस प्रकार की किसी भी दीवार से घिरे हुए हैं तो आध्यात्मिकता से कोसों दूर हैं।

आध्यात्मिकता के असीमित क्षेत्र में विश्व बसा हुआ है। और विश्व को धर्म, जाति, भाषा, रंग, देश आदि की भिन्नताओं की दीवारों ने कई छोटे-छोटे खंडों में विभाजित कर दिया है। यह छोटे-छोटे खंड बन्द कमरों की तरह हैं। जिस प्रकार हम बन्द कमरे में बैठकर उसकी खिड़की से बाहर झाँकें तो हम समस्त आकाश को नहीं देख सकेंगे। जितना आकाश उस खिड़की के चौखटे में ही समा सकता उतने आकाश का ही अवलोकन कर सकेंगे,

इसी प्रकार इन छोटे-छोटे खंडों में सीमित होकर हम विश्व-पिता परमात्मा की सम्पूर्ण अनुभूति नहीं कर सकते हैं। और यदि हम कमरे से बाहर खुले मैदान में आ जाएं तो हम समस्त आकाश को देख सकते हैं, समस्त विश्व का अवलोकन कर सकते हैं। उसी प्रकार यदि हमें परमात्मा का पूर्ण अनुभव करना है या परमात्मा से पूर्ण प्राप्ति करनी है तो हमें इन सर्व प्रकार की दीवारों को तोड़कर आध्यात्मिकता के खुले आँगन में आना होगा अन्यथा हमारा सम्पूर्ण ईश्वरीय प्राप्ति से वंचित रहना अवश्यम्भावी है।

हमारा पंच भौतिक शरीर भी हमारे आध्यात्मिक जीवन के आगे एक दीवार है। परमपिता परमात्मा से जो हमें आध्यात्मिक सुख, शान्ति, स्नेह शक्ति, आदि की प्राप्ति हो सकती है उस प्राप्ति को पाने के लिए हमें इस देह को तोड़कर देही अर्थात् आत्मिक स्वरूप बनना होगा। इस देह के अन्दर जो पंच ज्ञानेन्द्रियां हैं, वे पंच भौतिक हैं। अर्थात् वे इन्द्रियाँ केवल भौतिक सुखों का ही अनुभव करा सकती हैं। आँख किसी सुन्दर नजारे को देखने के सुख का अनुभव कराएगी, कान किसी राग के सुख का अनुभव, नाक किसी गन्ध के सुख का अनुभव, त्वचा किसी स्पर्श के सुख का अनुभव तथा जिह्वा किसी स्वाद के सुख का अनुभव कराएगी, इन पाँचों ज्ञानेन्द्रियों के विषय भी पंचभौतिक ही हैं। लेकिन आध्यात्मिक सुख व शान्ति इन भौतिक इन्द्रियों के द्वारा अग्राह्य हैं। अर्थात् यह पाँचों ही इन्द्रियाँ आध्यात्मिक सुख एवं शान्ति का अनुभव कराने में असमर्थ हैं। जब हम देह को भूलकर विदेही बन जाएंगे और देह के भान से ऊपर उठ जाएंगे तो हमारी इन्द्रियाँ अतीन्द्रियाँ बन जाएगी। और इन्द्रियों के विषयों के सम्पर्क में आने पर भी विचलित नहीं होगी। तब हम इन इन्द्रियों के विषयों से छट कर अन्तर्मुखी बन जाएंगे तभी हमें आत्मा में निहित वास्तविक सुख शान्ति का आभास होने लगेगा और हम इन्द्रिय-जीत बन जाएंगे। इस प्रकार देह-भान से ऊपर उठकर इन्द्रियों के आकर्षण से स्वतन्त्र होकर आन्तरिक अर्थात् आध्यात्मिक सुख, शान्ति, शक्ति आदि की प्राप्ति ही आध्यात्मिक जीवन की चरम सीमा है। इसके विपरीत यदि हम इन्द्रियों के विषयों की ओर आकर्षित होकर इन्द्रियों के सुखों को ही सर्वस्व मानेंगे तो एक दिन जब इन्द्रियाँ शिथिल हो जाएंगी और विषयों को ग्रहण करने में असमर्थ हो जाएंगी तो हम इन्द्रियों के सुखों से भी वंचित हो कर सदा के लिए दुख के सागर में डूब जाएंगे। अतः देह की दीवार को तोड़कर ही हम आध्यात्मिकता का रस ले सकते हैं।

इसके अलावा आध्यात्मिक जीवन की प्राप्ति भी अपनी ही है। आध्यात्मिकता से सम्पन्न व्यक्ति इस असार संसार के मान, शान, वैभव आदि में लीन न होकर बल्कि इन्हें क्षण भंगुर मृगतृष्णा समान समझकर इनमें लीन नहीं होता तथा सदा अन्तर्मुखी रहकर सदा काल के आन्तरिक सुख शान्ति आनन्द का रसास्वादन करता रहता है। वह अपने दिव्य गुणों, दिव्य शक्तियों के बल से मानव के हृदय को जीतकर विश्व महाराजन बनता है। तथा मेरे, तेरे, अपने पराए की तुच्छ भावनाओं से ऊपर उठकर सारे विश्व को भ्रातृत्व की भावना से देखता है और ईश्वरीय अलौकिक प्राप्ति से तृप्त होकर वह आत्मा सदा सबका कल्याण करने एवं दान देने के लिए सदा तत्पर रहता है। वह तृप्त आत्मा कभी किसी के आगे भिखारी नहीं बनता है। बल्कि सदा दातापन की अवस्था में रहता है। अतः आध्यात्मिक जीवन सर्वश्रेष्ठ जीवन है। अपने सांसारिक जीवन के साथ-साथ आध्यात्मिकता को भी जीवन में पूरा-पूरा स्थान देना चाहिए तभी हमारा जीवन जीवन कहला सकेगा और हम लोक के साथ-साथ परलोक को भी सुधार सकेंगे। ००

सेवा समाचार (चित्रों में)

सोलापुर में महानगर पालिका के एक हाईस्कूल में ब्र० कु० सोमप्रभा जी शिव बाबा का सन्देश देते हुए।

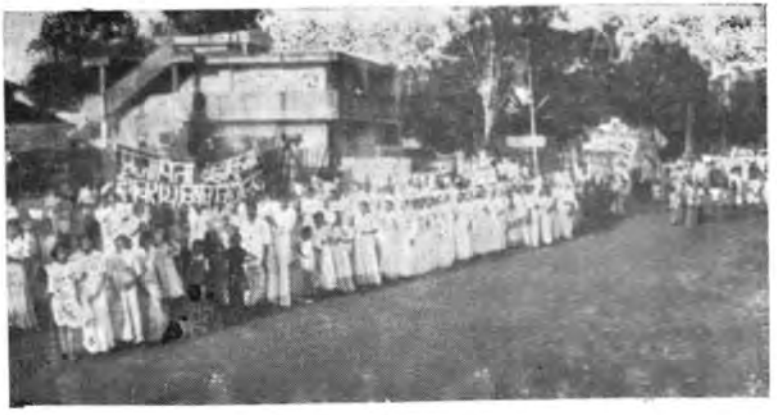

संकेश्वर में 'मानव दिव्यीकरण आध्यात्मिक मेला' के अवसर पर निकाली गई शोभा यात्रा का एक दृश्य

भावनगर में 'चरित्र निर्माण प्रदर्शनी' के उद्घाटन अवसर पर सम्बोधन करती हुई ब्र० कु० गीता बहन। उनकी बाईं ओर महापौर भ्राता रमणीक भाई मनि भाई गाँधी तथा दाईं ओर ब्र० कु० हंसा तथा अन्य मंच पर उपस्थित हैं।

सचित्र समाचार

बस्ती में ब्र० कु० दमयन्ती आध्यात्मिक प्रदर्शनी में ब्लाक प्रमुख तथा अन्य को चित्रों की व्याख्या देते हुए।

इटारसी सेवाकेन्द्र की ओर से कोडाडोगरी में आयोजित आध्यात्मिक प्रदर्शनी में ब्र० कु० रूकमणी जनता पार्टी के नेता एवं पत्रकार भ्राता नारायण मोर को चित्रों पर समझा रही हैं।

ग्वालियर सेवाकेन्द्र की ओर से राम मन्दिर में लगाई गई आध्यात्मिक प्रदर्शनी का अवलोकन करते हुए मन्दिर के अधिकारी।

"शिव भगवानुवाच"

मीठे बच्चे—मंसा को शुद्ध रखने के लिए शुद्ध अन्न और श्रेष्ठ संग की जरूरत है। मंसा शुद्ध है तो मानसिक भोगना से छूट सकते हैं। यह जरूरी नहीं है कि तन बीमार है तो मन भी बीमार हो जाए। मन का तन पर असर आ सकता लेकिन तन का मन पर असर न आये इसकी खबरदारी चाहिए।

(शेष पृष्ठ ८ का) **शुभ चिन्तन की कला**

यह उपचार आदि दो मास तक चलता रहा, अन्त में मेरे चिकित्सक ने मस्तिष्क की टी० बी० निरोध की दवायें देना शुरू किया जिससे एक मास के बाद मुझे कुछ लाभ हुआ। इस बीमारी के दौरान मैं सोचता था यह बीमारी तो शरीर को हुई है, आत्मा को नहीं। इसलिए मैं आत्मा तो शांति एवं आनंद के अनुभव में स्थित रह सकता हूँ।

मैं ऐसा नहीं सोचता था कि न जाने मुझे क्या हो गया। मुझे इतना कष्ट सहन करना पड़ता है। मेरा समय बरबाद हो रहा है। मैं तो सदैव यह सोचता था कि इतना सारा समय आनायास ही प्रभुमिलन के लिया मिल गया है। मैं अधिक से अधिक समय परमात्मा को प्यार से याद करने में बिताता था। मैंने अब तक योग का जो पुरुषार्थ किया है उससे मैंने कैसी स्थिति को प्राप्त किया है उसकी परीक्षा उस समय मानता था। मेरे जन्म जन्मान्तर के विकर्मों को समाप्त करने का सुनहरा मौका समझता था। इस प्रकार के शुभ विचारों से मुझ आत्मा को गहरी शांति की अनुभूति होती थी। मेरे चिकित्सक मित्र भी मुझे कहते थे डाक्टर पटेल, तुम्हारे चेहरे से तो ऐसा कुछ भी नहीं मालूम पड़ता कि तुम बीमार हो। मैं ब्रह्माकुमारी विद्यालय का लाख लाख धन्यवाद मानता हूँ कि जहाँ पर मैंने शुभचिंतन की कला सीखी। आध्यात्मिक ज्ञान एवं कर्मों की गुह्य गति को समझने से व्यक्ति शुभ एवं कल्याणकारी बातों को ही सोचता है।

कई लोग मानते हैं कि आध्यात्मवादी लोग पलायनवादी एवं निष्क्रिय होते हैं। परंतु जब व्यक्ति परमपिता परमात्मा शिव द्वारा दिये गये ज्ञान को समझता है तब वह सच्चे अर्थ में कर्म-योगी बनता है तथा वह सक्रिय भी बनता है। मुझे विश्वास है कि आप अपने लाभ हेतु एवं अन्य के कल्याण हेतु शुभ चिन्तन की कला को अवश्य सीखेंगे।

OO

ओ शिव शक्ति !

ब्र० कु० राजकुमारी, मजलिस पार्क, देहली

असुरों की तो कोई बात नहीं,
वो तो तेरे पाँव तले।
बच के रहना ओ शिव शक्ति उनसे—
जो असुरों का वेष लिए फिरते हैं।
काँटों की तो कोई बात नहीं,
परिचित होते सब उनसे।
पर बच के रहना ओ शिव शक्ति उनसे—
शूल सरीखे जो फूल चभा करते हैं।
जहर तुम्हें मार नहीं सकता,
नील कंठी जो बन गई हो।
पर बच के रहना ओ शिव शक्ति उनसे—
विष भरे घट जो मुख अमृत लेप लिए फिरते हैं।
कीचक, ठग, दुर्योधन, कंसों की तो कोई बात नहीं,
उन्हें बदलने आई हो।
पर बच के रहना ओ शिव शक्ति उनसे—
जो बन अपने, सर्वस्व ठगा करते हैं।
कटु तो कटु है ही, बच कर सब रहते,
पर तुम बच के रहना ओ शिव शक्ति उनसे—
बनकर मीठे जो, संस्कार कड़ुए भर देते हैं।
सेफ्टी हर हाल में, स्वस्थिति हर बात में,
शुभ भाव रहे सदा सब पर।
रहें फिदा सदा खुदा के नाम रूप पर।
दृढ़ प्रतिज्ञ रहना इसी पर ओ शिव शक्ति !
अन्यथा कुक्कुट ज्ञानी तो बहुत फिरा करते हैं॥

आध्यात्मिक सेवा समाचार

ब्र० कु० लक्ष्मण, सत्यनारायण, कृष्णा नगर, देहली द्वारा संकलित

आबू पर्वत—ब्र० कु० ईश्वरीय विश्व विद्यालय के इतिहास में प्रथम बार भारत देश के सर्व सेवाकेन्द्रों की टीचर्स बहनों का विशाल रूप से अलौकिक रूहानी समागम १ जून से १२ जून तक रखा गया। जिसमें ८५० समर्पित ब्र० कु० बहनें उपस्थित हुईं जो विश्व में शान्ति का सन्देश देने तथा आध्यात्मिक जागृति द्वारा चरित्र उत्थान का कार्य करने में तत्पर हैं। सभी क्षेत्रों की संचालिका बहनें भी इस अवसर पर पधारीं। इस समागम में विश्व कल्याण की नई-नई योजनाओं पर गहराई से विचार-विमर्श किया गया। साथ-साथ स्व-उन्नति तथा विश्व उन्नति के लिए विशेष योग तपस्या के भी कार्यक्रम रखे गये। एक जून को सायं ६.३० बजे ओम शान्ति भवन के विशाल सभाग्रह में विद्यालय की मुख्य प्रशासिका दादी प्रकाशमणी जी ने सभी का स्वागत करते हुए कहा कि विश्व में पवित्रता और शान्ति के वायब्रेशन फैलाने वाले सफेद पोशधारी फरिश्तों का मधुबन के इस आंगन में स्वागत है। यह भी सफलता और सम्पन्नता की निशानी है जो सभी ने एकमत हो, एक 'हाँ जी' का पाठ पढ़ा है और एक साथ एकत्रित हुए हैं। भगवान का बुलावा हुआ और पहुँचे—ऐसे सदा एवररेडी रहने वालों का स्वागत है।

इस अवसर पर पधारी सभी जोन निर्देशिका बहनों ने भी अपने-अपने शुभ आशीर्वाद वचनों से सबका स्वागत किया। विद्यालच के आफीसर इन्चार्ज ब्र० कु० निर्वैर जी ने अपने उद्गार व्यक्त करते हुए कहा कि आज का यह शुभ दिन मधुबन के इतिहास में सुनहरी अक्षरों से लिखा जायेगा। अब तक हम ब्रह्मा की हजार भुजायें जो सुनते थे, वह आज प्रत्यक्ष रूप में देख रहे हैं। यह भुजायें सारे संसार का गौरव हैं। सारे संसार को आध्यात्मिक रोशनी देने वाली लाइट हाउस हैं। १०० ब्राह्मणों से उत्तम कन्याओं का यह समागम ऐसी कोई नई योजनायें बनायेगा जो शीघ्र ही सारे विश्व का कल्याण होगा। ईश्वरीय साहित्य के मुख्य सम्पादक ब्र० कु० जगदीश जी ने कहा कि इस ओम शान्ति भवन में दो विश्व शान्ति महासम्मेलन जो हुए हैं वह इस विद्यालय के इतिहास में बहुत ही महत्व पूर्ण कदम रहे हैं परन्तु यह एक तीसरा बड़ा कदम है जिसमें चैतन्य ज्ञान गंगायें भरपूर होकर जायेंगी। और निश्चित ही देश विदेश का कल्याण होगा। इस विश्व विद्यालय के १९८६ में ५० वर्ष पूरे हो रहे हैं, उस समय जो गोल्डन जुबली मनायी जायेगी जिससे विश्व में परमात्म प्रत्यक्षता हो उसका भी यह एक पहला कदम है।

यू० के० सेवाकेन्द्रों की संचालिका ब्र० कु० सुदेश बहन तथा सैनफ्रांसिसको सेवाकेन्द्र की संचालिका ब्र० कु० चन्द्रू बहन ने विदेश की ओर से सभी का स्वागत किया और विदेशों में चल रही ईश्वरीय सेवाओं से सबको अवगत कराया।

श्रीनगर में आध्यात्मिक मेला—जम्मू-कश्मीर सेवाकेन्द्रों की तरफ से ४ जून से २४ जून तक गवर्नमेन्ट सैन्ट्रल मार्किट ग्राउन्ड श्रीनगर में एक विश्व नव-निर्माण आध्यात्मिक मेला का आयोजन किया गया। इस मेले का उद्घाटन भ्राता पी० एल० हान्डू (कानून व राजस्व मंत्री जे० के०) जी ने किया। उस अवसर पर मुख्य अतीथि के रूप में पधारे थे भ्राता हकीम हबीबुल्ला (कृशि व वन-विभाग के मंत्री जे० के०) इस मेले का विशेष आकर्षण ६० माडलों द्वारा अनेक समस्याओं का हल दर्शाया गया था, सुन्दर रंगीन चित्रों द्वारा मानव का उच्च लक्ष्य देवपद की प्राप्ति पर विशेष ज़ोर दिया गया। इसके अतिरिक्त राजयोग शिविर का भी आयोजन किया गया। इस मेले को कई हज़ार आत्माओं ने देखा और बहुतों ने राजयोग शिविर से विशेष लाभ प्राप्त किया।

मुजफ्फरपुर—समाचार मिला है कि औरंगाबाद में एक आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया—जिसका उद्घाटन वहाँ के साइंस कालेज के प्रोफेसर जी ने किया। प्रदर्शनी के साथ-साथ योग शिविर का भी आयोजन किया गया। ब्रह्मपुरा में लक्ष्मी नारायण मंदिर में भी आध्यात्मिक प्रदर्शनी लगाई गयी, इस प्रदर्शनी का उद्घाटन कांग्रेस (आई) के अध्यक्ष एवं मतस्य विभाग के अध्यक्ष ने किया इस प्रदर्शनी को अनेक प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने देखा तथा लाभ उठाया।

भावनगर—सेवाकेन्द्र की ओर से जैनियों के विश्व-विख्यात तीर्थ स्थान पर विश्व नव निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी

का आयोजन किया गया। इस अवसर पर एक विशाल शोभा यात्रा भी निकाली गयी। प्रदर्शनी का उद्घाटन स्थानीय लायन्स क्लब के प्रेसीडेन्ट ने किया।

कलकत्ता—प्राप्त समाचार के अनुसार माल्दाह जिले के काहला गांव में आयोजित एक धर्म सम्मेलन में ब्र० कु० बहनों को राजयोग प्रदर्शनी तथा प्रवचन का निमन्त्रण प्राप्त हुआ। इस धर्म सभा में १५ धार्मिक संस्थाओं को एक-एक दिन का कार्यक्रम मिला था। केवल ईश्वरीय विश्व विद्यालय को १५ दिन के लिए प्रदर्शनी, प्रोजेक्टर शो, फिल्म वा राजयोग शिविर करने का अवसर प्राप्त हुआ। दीदी निर्मल शान्ता जी ने राजयोग द्वारा जीवन में सुख शान्ति कैसे मिले इस विषय पर प्रकाश डाला।

बम्बई—बोरीवली सेवाकेन्द्र की ओर से समाचार मिला है कि महाराष्ट्र में तारापुर पावर स्टेशन की कालोनी में दो दिन के लिए आध्यात्मिक प्रदर्शनी तथा ल० ना० की झांकी और सार्वजनिक कार्यक्रम का आयोजन किया गया। पावर स्टेशन के सभी आफीसर्स और डायरेक्टर आदि ने भी प्रदर्शनी देखी। यह भी समाचार मिला है कि इन्हीं दिनों डाक्टर्स वा इंगलिश मीडियम स्कूल के टीचर्स के स्नेह मिलन का भी आयोजन किया गया जिसमें ५० डाक्टर्स तथा टीचर्स ने लाभ लिया।

रांची—प्राप्त समाचार के अनुसार बिहार एलोए स्टील्स लिमीटेड के स्थानीय रजिस्टर्ड आफिस में द्वितीय विश्व शान्ति महासम्मेलन की वीडियो फिल्म वहाँ के कार्यकर्ताओं को दिखाई गई जो बहुत ही उत्साहपूर्वक सभी ने देखी। साथ में प्रदर्शनी के चित्र भी समझाने हेतु लगाये गये थे—जिससे अनेक आत्माओं ने ज्ञानार्जन किया। रांची सेवा-केन्द्र पर ही माउण्ट आबू के ओम शान्ति भवन में हुए द्वितीय विश्व शान्ति सम्मेलन की वीडियो फिल्म प्रदर्शित की गई।

आजमगढ़—सेवाकेन्द्र की ओर से समाचार मिला है कि ग्राम दौलतावाद में चरित्र-निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया जिसको देखकर आस-पास के लोगों ने विशेष लाभ प्राप्त किए। इसके अलावा जिला गाजीपुर में भुडकुडा व जरवनिया में भी आध्यात्मिक प्रदर्शनी द्वारा ईश्वरीय सन्देश दिया गया इन्टर कालेज के व कन्यापाठशाला के विद्यार्थियों ने विशेष लाभ लिया।

चित्रकूट धाम—समाचार मिला है कि बाँदा जिले कि धार्मिक तहसील राजापुर में आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया वहाँ की आत्माओं की विशेष रुचि पर गीता पाठशाला खोल दी गई है।

जोधपुर—समाचार मिला है कि जोधपुर में एक बड़ा मेला लगा था उसमें एक स्टाल लेकर आध्यात्मिक प्रदर्शनी लगाई गयी। एक मास तक यह प्रदर्शनी लगी रही—अनेकानेक आत्माओं ने लाभ प्राप्त किया।

काठमंडू—सेवाकेन्द्र से ज्ञात हुआ है कि ईश्वरीय सेवा की अच्छी लहर चल रही है, जगह-जगह प्रवचन, फिल्म शो, प्रदर्शनी द्वारा ईश्वरीय सन्देश दिया जा रहा है, घर-घर में सत्संगों का विशेष प्रोग्राम चला है इस सेवा द्वारा अनेकानेक मुख्य व्यक्ति ईश्वरीय सम्पर्क में आये हैं।

विजयवाड़ा—समाचार मिला है कि मचिलीपटनम नामक शहर में विश्व नव निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। प्रदर्शनी का उद्घाटन मुख्य व्यापारी भ्राता पन्डू रंगाराव जी ने किया, मुख्य अतिथि के रूप में वहाँ के भूतपूर्व संसद सदस्य राव जी ने भाग लिया। इस अवसर पर 'शान्ति यात्रा' का भी आयोजन किया गया—इसके साथ-साथ प्रेस कांफ्रेंस भी बुलायी गई। अनेक अखबारों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

भंडारा—सेवाकेन्द्र पर विशेष योगदान और ब्रह्मा भोजन के अवसर पर अनेक प्रतिष्ठित व्यक्तियों को ईश्वरीय सन्देश दिया गया। ज्ञान के सूक्ष्म बिन्दुओं पर प्रकाश डाला गया, आत्म-अनुभूति व परमात्म अनुभूति पाकर सभी आत्मायें अपने आपको धन्य-धन्य महसूस करने लगी।

आबू पर्वत—आध्यात्मिक संग्रहालय से प्राप्त समाचार के अनुसार गुजरात के लोकप्रिय संत श्री मुरारी बापू का हजारों भक्तों की भीड़ के बीच आगमन हुआ। आपने अपने लम्बे प्रवचन में लोगों को धर्मशील बनने की अपील की। राजस्थान भूमि की महानता का वर्णन करते हुए हरेक वर्ग को अपनी सही ड्यूटी निभाने की प्रेरणा दी। इसी अवसर पर ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय द्वारा ईश्वरीय ज्ञान का साहित्य एवं श्रीकृष्ण का मनमोहक चित्र आपको भेंट किया गया। संत जी सौगात प्राप्त करते बहुत ही प्रसन्न हुए तथा विद्यालय के सेवाओं की सराहना की और अधिक समय देकर विद्यालय के मुख्यालय में पधारने का वचन दिया। यह भी समाचार मिला है कि वर्तमान समय संग्रहालय द्वारा हजारों आत्माओं को प्रति-दिन ईश्वरीय सन्देश दिया जा रहा है। आबू में आने वाले

सभी पर्यटक आध्यात्मिक संग्रहालय को अवश्य ही देखते तथा राजयोग की अनुभूति करते हैं।

रुड़की—समाचार मिला है कि लुसाका से पधारी ब्र० कु० प्रतिभा बहन द्वारा रुड़की तथा देहरादून में अनेक सेवायें हो रही हैं। रुड़की नगर के स्थानीय लायन्स क्लब, रोटरी क्लब तथा बार एसोशियेसन में राजयोग पर आपके प्रवचन हुए। लायन्स क्लब में शहर के नामीग्रामी डाक्टर्स तथा इन्जीनियर्स ने भाग लिया। उन्हें विधिपूर्वक राजयोग का अभ्यास कराया गया। बार एसोशियेसन में आपने १०० वकीलों के समक्ष राजयोग पर प्रवचन किया तथा शिव बाबा के ला एण्ड आर्डर पर चलने की प्रेरणा दी।

सम्बलपुर—समाचार मिला है कि वहाँ से ७० किलोमीटर दूर "बरपाली" नामक शहर में विश्व नव निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। प्रदर्शनी के साथ-साथ प्रवचन तथा स्लाईड शो का भी कार्यक्रम चला। "युवा वर्ग" से सम्बन्धित स्लाईडस द्वारा युवकों को ईश्वरीय सन्देश दिया गया। इसी प्रकार वहाँ के "ग्राम सेविका तालीम केन्द्र" में भी आध्यात्मिक कार्यक्रम रखे गये।

सिद्धपुर—समाचार मिला है कि वहाँ के प्रसिद्ध "कोर्ट के मैदान में" एक आध्यात्मिक मेले का आयोजन किया गया। जिसका उद्घाटन विधान सभा के अध्यक्ष भ्राता नटवरलाल शाह ने दीप प्रज्वलित करके किया। उद्घाटन के पूर्व शहर के मुख्य मार्गों से एक विशाल शोभा यात्रा निकाली गई। मेले का मुख्य आकर्षण चैतन्य नव देवियों की झाँकी थी। मेले में प्रतिदिन एक विशेष कार्यक्रम का भी आयोजन किया जाता था—जैसे युवा सम्मेलन, महिला सम्मेलन, रोटरी, लाइन्स, लीयो क्लब के स्नेह मिलन आदि जिससे अनेक प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने ईश्वरीय सन्देश प्राप्त किया।

उदयपुर—प्राप्त समाचार के अनुसार सेवाकेन्द्र के समीप डूंगरपुर में बहुत अच्छी सेवा चल रही है। वहाँ के प्रसिद्ध स्कूल "महारावल हायर सैकेन्ड्री स्कूल" में तीन दिन के लिए एक आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। जिसका उद्घाटन नगरपालिका के अध्यक्ष भ्राता किशन लाल गर्ग जी ने किया। सायंकाल आयोजित सार्वजनिक कार्यक्रम में जिला प्रमुख तथा नगर के कई अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने लाभ लिया। डूंगरपुर के महाराजा महारावल लक्ष्मणसिंह जी भी पधारे तथा प्रदर्शनी को देख बहुत ही प्रसन्न हुए। प्रदर्शनी समझने के पश्चात आपने प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा कि आपने जो शिव के बारे में व्याख्या दी हैं मैं इससे पूर्णतः सहमत हूँ।

दार्जिलिंग—सेवाकेन्द्र की ओर से चरित्र निर्माण प्रदर्शनी तथा युवा उत्थान प्रदर्शनी के आयोजन किये गये। गवर्नमेन्ट कालेज के प्रिंसीपल तथा प्रोफेसर ने इसमें विशेष रुची दिखाई। प्रदर्शनी में प्रतिदिन रात्रि को प्रोजेक्टर शो भी हुआ। एक दिन यूथ की स्लाईडस दिखाई गई। आबू युनिवर्सल पीस कानफ्रेन्स की वीडियो द्वारा भी विद्यालय का दिग्दर्शन कराया गया। हजारों आत्माओं ने इस कार्यक्रम से ईश्वरीय सन्देश प्राप्त किया।

विदेश से प्राप्त सेवा समाचार

सूरीनाम—प्राप्त समाचार के अनुसार सूरीनाम से १० किलोमीटर दूर क्वारा शहर के मन्दिर में वहाँ के पण्डित के निमन्त्रण पर प्रवचन तथा साप्ताहिक ज्ञान का पाठ्यक्रम रखा गया। क्वारा शहर में ९० प्रतिशत भारतीय निवास करते हैं, उन्हें आत्मा, परमात्मा का सत्य परिचय कराया गया तथा सभी ने राजयोग अभ्यास भी किया। शहर के नामीग्रामी पण्डितों ने भी ईश्वरीय ज्ञान में विशेष रुची दिखाई। सनातन धर्म सभा के प्रमुख भ्राता मोहन लाल शास्त्री स्वयं ही सेवाकेन्द्र पर पधारे तथा ज्ञान चर्चा की।

लन्दन—सेवाकेन्द्र से प्राप्त समाचार के अनुसार वहाँ के बी० बी० सी० रेडियो पर हिन्दी तथा अंग्रेजी कार्यक्रम में "त्योहारों के आध्यात्मिक रहस्य" पर ब्र० कु० सुदेश बहन का प्रवचन चला तथा प्रवचन के पश्चात राजयोग का अभ्यास भी कराया गया। वहाँ के प्रतिनिधियों ने ईश्वरीय विश्वविद्यालय का साप्ताहिक पाठ्यक्रम सार रूप में, ५ मिनट में एक लेसन प्रसारित करने की स्वीकृति दी है। जो हर सप्ताह प्रसारित किये जायेंगे। रेडियो एल० बी० सी० पर दो गीत हिन्दी तथा अंग्रेजी में समाचार के पहले बजाये जाते हैं। यह भी समाचार मिला है कि मानचेस्टर युनिवर्सिटी में आयोजित एक सेमीनार में "आध्यात्मिक शक्ति ही मुख्य स्त्रोत है" इस विषय पर प्रकाश डाला गया। जिससे वहाँ के निवासियों ने काफी लाभ प्राप्त किया। ब्राइटन शहर में आयोजित एक आध्यात्मिक रहस्यवाद मेले में राजयोग की प्रदर्शनी लगाई गई जिसमें हजारों मनुष्यों ने लाभ लिया। रेडियो द्वारा भी ईश्वरीय सन्देश प्रसारित हुआ। यह भी समाचार मिला है कि

लण्डन में हर सप्ताह ३ माह के लिए शनिवार को सुबह १० बजे से शाम ५ बजे तक लण्डन की मुख्य एरिया सुपर मार्केट में विशेष स्थान लेकर प्रदर्शनी का आयोजन किया गया है जिससे अनेकानेक आत्मायें लाभ उठा रही हैं। वहाँ के रोटरी क्लब में भी ३-४ बार प्रवचन हुए।

प्राप्त समाचार के अनुसार इंगलैण्ड की क्वीन मदर से ब्र० कु० बहनें मिली और उन्हें परमात्मा शिव का गोल्डन बैज भेंट किया। उन्होंने ब्र० कु० ईश्वरीय विश्व विद्यालय की गति विधियों की पूरी जानकारी ली तथा शान्ति का सन्देश भी सुना। यह भी समाचार मिला है कि यूरोप के ११ स्थानों से २७० राजयोगी भाई बहनो की एक रिट्रीट पेरिस से ४० किलोमीटर दूर सैमरेन नामक स्थान पर ३ दिन के लिए एक महल में रखी गई। जिसमें यूरोप की राजयोगी टीचर्स बहनो ने "स्व परिवर्तन तथा विश्व परिवर्तन पर विचार विमर्श किया। रीयल्टी, रायल्टी और युनिटी पर भी विस्तारपूर्वक स्पष्टीकरण किया गया। इसी प्रकार का समाचार हेमबर्ग से भी प्राप्त हुआ है।

स्वीडन—प्राप्त समाचार के अनुसार यू० के० सेवाकेन्द्रों की निर्देशिका ब्र० कु० सुदेश बहन की स्वीडन यात्रा बहुत ही सफल रही। केवल एक सप्ताह के दौरान प्रतिदिन अनेक कार्यक्रम स्वीडन शहर में आयोजित किये गये। स्टाकहोम में गाँधी फाउन्डेशन संस्थान के निमन्त्रण पर आपने शिव पिता के विश्व परिवर्तन का उद्देश्य, सत्य, डबल अहिंसा, रूहानी प्रेम की शिक्षा तथा परोपकार की भावना द्वारा विश्व पिता के कर्त्तव्यों पर प्रकाश डाला तथा रामराज्य की खुशखबरी सुनाई। वहाँ के भारतीय राजदूत तथा उनकी धर्मपत्नी से भी आपका मिलना हुआ। उन्होंने भी ज्ञान में अच्छी रुची ली। इसके अलावा वहाँ के युनिवर्सिटी प्रोफेसर से भी आपकी मुलाकात हुई उन्हें आध्यात्मिक विज्ञान अर्थात् राजयोग द्वारा इस सृष्टि के पार के अनुसंधान कैसे इस ईश्वरीय विश्वविद्यालय द्वारा हो रहे हैं, इस बात से अवगत कराया गया उन्होंने इसमें विशेष रुची ली तथा आबू आने की इच्छा प्रकट की। वहाँ के कैथोलिक तथा मैथोडिस्ट चर्च के पादरी भी सेवाकेन्द्र पर आपसे विशेष मुलाकात करने आये तथा ज्ञान की चर्चा की।

मनीला—प्राप्त समाचार के अनुसार के अनुसार सेवाकेन्द्र का वार्षिक उत्सव बहुत ही धूमधाम से मनाया गया। एक वर्ष के अन्तर्गत हुई ईश्वरीय सेवाओं का विवरण छपवाकर बाँटा गया। तथा नये वर्ष के लिए ईश्वरीय सेवाओं की योजनायें भी बनाई गई। १३ मई को सेवाकेन्द्र पर ही "मदर डे" मनाया गया जिसमें शहर की मुख्य २२ माताओं ने भाग लिया। सभी को अलौकिक माता पिता के स्नह से परिचित कराया गया। अभी वे मातायें अपने बच्चों को ईश्वरीय ज्ञान लेने के लिए सेवाकेन्द्र पर भेजती रहती हैं। वहाँ के भारतीय महिला क्लब की प्रेजीडेन्ट बहन सीतू मुखी से भी बहनों की मुलाकात हुई उन्होंने क्लब की २६० महिलाओं के समक्ष प्रवचन करने का निमन्त्रण दिया। ला एशियन एसोशियेसन के प्रेजीडेन्ट मिस्टर राहुल गुको सेवाकेन्द्र पर पधारे उन्हें विद्यालय की गति-विधियों से अवगत कराया गया तथा पीस मैनीफैस्टो वा पीस वा पीस चार्टर भेंट किया गया। उन्होंने आबू में आने की इच्छा व्यक्त की है। इसी प्रकार युनिवर्सिटी आफ लाइफ के वाइस प्रेजीडेन्ट से भी बहनो की मुलाकात हुई तथा ईश्वरीय सेवाओं से अवगत कराया गया। उन्होंने युनिवर्सिटी में प्रवचन करने का निमन्त्रण दिया। २ जून को सेवाकेन्द्र पर यूथ डे भी मनाया गया।

ग्याना—प्राप्त समाचार के अनुसार ग्याना में युवकों के लिए स्नेह मिलन रखा गया जिसमें १०० युवक तथा ४० बच्चों ने भाग लिया। सभी को आध्यात्मिक शक्ति से अवगत कराया गया। इन्डियन हाई कमिश्नर की धर्मपत्नी जो कि सेवाकेन्द्र पर राजयोग का अभ्यास करती हैं उनकी ओर से इन्डियन क्लचरल सेन्टर पर महिला क्लब में ब्र० कु० कुमुन्द बहन का प्रवचन हुआ। विषय था—"४० साल की उम्र में स्त्री की शारीरिक और मनोवैज्ञानिक समस्यायें।" प्रवचन सुनने के पश्चात कई महिलायें नियमित ज्ञान योग की क्लासेज कर रही हैं। यह भी समाचार मिला है कि ग्याना के भूतपूर्व प्रधान मंत्री "मिस्टर जगन" जो कि अभी पार्लियामेन्ट के मेम्बर हैं, उनसे ब्र० कु० बहनो की मुलाकात हुई लगभग डेढ़ घण्टे तक विश्व शान्ति तथा राजयोग पर चर्चा हुई उन्होंने सुझाव दिया कि शान्ति की कमेटी में राजयोगी मेम्बर जरूर होने चाहिए। वहाँ की प्रसिद्ध सोशल वर्कर ब्र० कु० बरेन्डा बहन का रेडियो इन्टरव्यू हुआ जिसमें राजयोग पर प्रश्न उत्तर चले।

OO

जगदीश चन्द्र हसीजा, मुख्य सम्पादक, ब्र० कु० आत्म प्रकाश, सम्पादक, बी 9/19 कृष्णानगर, दिल्ली द्वारा सम्पादन तथा संजीव प्रिंटर्स, महिला कालोनी, गांधीनगर, दिल्ली-३१ से छपवाया, Regd. No. 10563/65-D, (E)—70